श्रीजिनायनम

सोलह भावना

तथा

दश धर्म

अब दर्शनविशुद्धि नाम प्रथम अगकी भावना वर्णन करिये है। हे भव्यजीव हो जो! या मनुष्यजन्म पाय याकू सुफल किया चाहो हो तो सम्यग्दर्शनकी विशुद्धता करहु। या सम्यग्दर्शन समस्त धर्मका मूल है सम्यक्त्व बिना श्रावकधर्म हू नाहीं होय नधर्म हू मुनिाहा होय सम्यग्दर्शनबिना ज्ञान है सो कुज्ञान चारित्र कुचारित्र है तप है सो कुतप है। सम्यग्दर्शन बिना यो जीव अनतकाल परिभ्रमण किया है अर जो चतुर्गति ससारपरिभ्रमणसू भयवान हो अर जन्मजरामरणतैं छुटया चाहो हो अर अनत अविनाशी सुखमय आत्माकू चाहो हो तो अन्य समस्त परद्रव्यनिमैं अभिलाषा छांडि सम्यग्दर्शनही की उज्जलता करहु। कैसीक है दर्शनविशुद्धता निर्वाणके सुखकी कारण है दुर्गतिका निराकरण करनेवाली है। विनय सपन्नादिक पद्रहकारणनिका मूल

कारण है दर्शन विशुद्धता नाही होय तो अन्य पन्द्रह भावना नाही होय है यातें संसारका दु खरूप अन्धकारके नाश करनेकू सूर्यसमान है भव्यनिकू परम शरण है ऐसी दर्शनविशुद्धता नाम भावना भावहू । जैसे स्वपरद्रव्यका भेद विज्ञान उज्वल होय तैसें यत्न करहु । यो जीव अनादिकालका मिथ्यात्वनाम कर्मके वशि होय आपका स्वरूपकी अर परकी पहिचान ही नाही करी जैसे पर्यायकर्मके उदयतें पर्याय पावै तैसी पर्यायकूही अपना स्वरूप जानता अपना सत्यार्थरूपका ज्ञानमैं अन्य होय आपके स्वरूपतें भ्रष्ट हुआ चतुर्गतिमें भ्रमण करै है देवकू जानै नाहीं धर्मकू जानें नाही सुगुरु कुगुरुकू जानै नाहीं । बहुरि पुण्यका, पापका, इसलोकका, परलोकका त्यागनेयोग्य, ग्रहणकरने योग्य, भक्ष्यअभक्ष्यका, सत्संगका कुसंगका, शास्त्रका कुशास्त्र का विचार रहित कर्मका उदयके रसमें एकरूप भया अपना हित अहितकू नाही पहिचानता परद्रव्यनिमें लालसारूप होय सदाकाल क्लेशित होय रह्या है कोऊ अकस्मात काललब्धिके प्रभावनितें उत्तमकुलादिकमें जिनेन्द्रधर्म पाया है यातें वीतराग-सर्वज्ञका अनेकांतरूप परमागमके प्रसादतें प्रमाणनयनिक्षेपनितें निर्णयकरि परीक्षाका प्रधानी होय वीतरागी सम्यग्ज्ञानी गुरुनि के प्रसादतें ऐसा निश्चय भया जो एक जाननेवाला ज्ञायकरूप

अविनाशी अखण्ड चेतना लक्षण देहादिक समस्तपरद्रव्यनितैं भिन्न मैं आत्मा हूं देह जाति कुल रूप नाम इत्यादिक मोतैं अत्यंन्त भिन्न हैं अर राग, द्वेष, काम, क्रोध, मद, लोभादिक कर्मके उदयतैं उपजैं मेरे ज्ञायकस्वभावमें विकार जैसैं स्फटिक मणि तो आप स्वच्छ श्वेतस्वभाव है तिसमैं डागके संसर्गतैं काला पीला, हरालाल, अनेक रंगरूपकं दीखे हैं तैसैं मैं आत्माका स्वच्छ ज्ञायकभाव हूं निर्विकार टंकोत्कीर्ण हूं मोहकर्मजनित राग द्वेषादिक यामैं झलकै हैं ते मेरे रूप नाहीं पर हैं ऐसैं तो अपने स्वरूपका निश्चय हुआ। बहुरि सर्वज्ञ वीतराग परम हितोपदेशक अर क्षुधा, तृष्णा, जन्म, मरण, रोग, शोक, भय, विस्मय, रागद्वेष, निन्द्रा, मद, मोह, चिन्ता, स्वेद, अरति इन अष्टादशदोषनिका अत्यन्त अभाव जाके भया और अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, अनन्तसुख इत्यादिक अनंत आत्मीक अविनाशीगुण जाके प्रकट भये सो ही आप्त हमारे वन्दन स्तवन पूजन करने योग्य है। अन्य कामी क्रोधी लोभी मोही स्त्रीनिमें आशक्त शस्त्रादिक ग्रहण किये कर्मके आधीन इन्द्रज्ञानके धारक सर्वज्ञतारहित हैं सो मेरे वन्दन स्तवन पूजन योग्य नाहीं। जो चोरनिमें शिरोमणि, अर जारनिमैं शिरोमणि है सो कैसैं आराधना योग्य होय।

बहुरि सर्वज्ञवीतरागका उपदेश्या अर प्रत्यक्ष अनुमानादिकरि जामे सर्वथा बाधा नाहीं आवे अर समस्त छहकायके जीवनि की हिंसारहित धर्मका उपदेशक आत्माका उद्धारके अनेक कातरूप वस्तुकू साक्षात प्रगट करनेवाला ही आगम है सो पढने पढावने श्रवण करने श्रद्धान करने वन्दने योग्य है। अर ज रागी द्वेषीनिकरि प्ररूपण किये अर विषयानुराग अर कषायके बधावनेवाले जिनमें हिंसाक करनेका उपदेश है ऐसे प्रत्यक्ष अनुमान करि बाधित एकांतरूप शास्त्र श्रवण पढनेयोग्य नाहीं वन्दनायोग्य नाहीं है। बहुरि विषयनि की वाछाका अर कषायका अर आरम्भ परिग्रहका याकैं अत्यन्त अभाव भया, केवल आत्माकी उज्जलता करनेमें उद्यमी, ध्यान स्वध्यायमैं अत्यन्त लीन, स्वाधीन कर्मबध जनित दु ख सुखमें साम्यभावके धारक, जीवन मरण लाभ अलाभ स्तवननिंदनेमैं रागद्वेषरहित उपसर्गपरीषहनिके सहने मैं अकम्प धैर्यके धारक परमनिरग्रन्थ दिगम्बर गुरू ही वन्दन स्तवन करने योग्य हैं अन्य आरम्भी कषायी विषयानुरागी कुगुरु कदाचित् स्तवन वन्दन करने योग्य नाहीं हैं। बहुरि जीवदया ही धर्म है हिंसा कदाचित् नाहीं जो कदाचित् सूर्यका

हो जाय अर अग्नि शीतल हो जाय अर सर्पका मुखमे अमृत हो जाय अर मेरू चलि जाय अर पृथ्वी उलट पलट हो जाय तो हू हिंसामे तो धर्म कदाचित नाहीं होय। ऐसा दृढश्रद्धान सम्यग्दृष्टिके होय है जाके अपने आत्माके अनुभवमें अर सर्वज्ञ वीतरागरूप आप्तके स्वरूप में अर निरग्रन्थ विषयकषाय रहित गुरुमें अर अनेकांत स्वरूप आगममें अर दयारूप धर्ममें शंकाका अभाव सो निशंकित अंग है सम्यग्दृष्टि यामें कदाचित् शंका नाहीं करै है। बहुरि सम्यग्दृष्टि है सो धर्मसेवनकरि विषयनि वांछा नाहीं करै है। जातैं सम्यग्दृष्टिकूं इन्द्र अहमिन्द्र-लोकके विषै हू महान वेदनारूप विनाशीक पापका बीज देखे हैं अर धर्मका फल अनन्य अविनाशी स्वाधीन सुखकरियुक्त मोक्ष दीखे है तातैं जैसैं बहुमूल्यरत्न छांटि काचखण्डकूं जौंहरी नाहीं ग्रहण करै है तैसें जाकूं साचा आत्मीक अविनाशी बाधारहित सुख दीख्या सो झूठा बाधासहित विषयनिका सुखमैं कैसे वांछा करै तातैं सम्यग्दृष्टि वांछारहित ही होय है। अर जो अव्रती सम्यग्दृष्टिके वर्तमानकालमैं आजीविकादिकनिमैं तथा स्थानादिकपरिग्रहमें वेदनाके अभावमें जो वांछा होय है सो वर्तमानकालकी

वेदना सहनेकी असमर्थतें वेदनाका इलाजमात्र चाहै है। जैसें रागी कडवी औषधितें अतिविरक्त होय तो हू वेदना का दुःख नाहीं सह्या जाय तातें कडवी औषधि वमन विरेचनादिकका कारण हू ग्रहण करै है दुर्गंध तेलादिक हू लगावै है अन्तरगमें औषधितें अनुराग नाहीं है तैसें सम्यग्दृष्टि निरावछक है तो हू वर्तमानके दुःख मेटनेकूं योग्य न्यायके विषयनिकी वाछा करै है। अर जिनक प्रत्याख्यानावरण कषायका अभाव भया ते अपना भी खड हो तो हू विषयवाछा नाहीं करै है यातें सम्यग्दृष्टि अशुभकर्मके उदयतें प्राप्त भई अशुभ सामग्री तिनमें ग्लानि नाहीं करै परिणाम नाहीं बिगाडे है मैं पूर्वे जैसा धर्म बांध्या तैसा भोजन स्त्री पुत्र दरिद्र सम्पदा आपदाकूं प्राप्त भया हूँ तथा अन्य किसीकूं रोगी दरिद्रीहीन नीच मलीन देखि परिणाम नाहीं बिगाडे है आपकी सामग्री जाना कलुषता नाहीं करै है तथा मलमूत्र कर्दमादिकद्रव्यकूं देखि अर भयकर स्मशान वनादिक्षेत्रकूं देखि भयरूप दुखदायी कालकूं देखि दुष्टपना कडवापना इत्यादिक वस्तुका स्वभावकूं देखि अपना परिणाममें क्लेशित नाहीं होना सो निर्विचिकित्सित अग सम्यग्दृष्टिके होय ही

है। बहुरि खोटे शास्त्रनितैं तथा व्यंतरादिकदेवनिकृत विक्रियातैं तथा मणि मन्त्र औषधादिकनिके प्रभावतैं अनेक वस्तुनिके विपरीत स्वभाव देखि सत्यार्थधर्मतैं चलायमान नाहीं होना सो सम्यग्दर्शनका अमूढदृष्टि गुण सो सम्यग्दृष्टि के होय हो है। बहुरि सम्यग्दृष्ट अन्य जीवनिके अज्ञान तैं अशक्ततातैं लगे हुये दोष देखि आच्छादन करे है जो संसारीजीव ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय कर्मके वशि होय अपना भूल रहे हैं कर्मके आधीन असत्य परधन-हरण कुशीलादि पापनिमें प्रवृत्ति करै हैं जे पापनितै दूरि प्रवर्तै हैं ते धन्य हैं। बहुरि कोऊ धर्मात्मापुरुष (नामीपुरुष) पापके उदयतैं चूकि जाय वाकू देखि ऐसा विचार जो यो दोष प्रगट हैसी तो अन्य धर्मात्मा अर जिनधर्मकी बडी निन्दा होसी या जानि दोष अच्छादन करै अर अपना गुण होय ताकी प्रशंसाका इच्छुक नाहीं होय है सो यो उपगूहनगुण सम्यक्त्वको है इनगुणनितैं पवित्र उज्वल दर्शनविशुद्धता नाम भावना होय है। बहुरि जो धर्मसहित पुरुषका परिणाम कदाचित् रोगकी वेदनाकरि धर्मतैं चलिजाय तथा दारिद्रकरि चलि जाय तथा उपसर्ग परीषहनिकरि चलिजाय तथा असहायता करि तथा अहार-

पानका निरोधकरि परिणाम धर्मतैं शिथिल होजाय तातैं उपदेशकरि धर्ममें स्तम्भन करें । भो ज्ञानी मो धर्म के धारक तुम सचेत होहू ऐसे कायरता धारण करि धर्मम शिथिल भय हो रोगकी वेदनासे धर्मतें चिगो हो ज्ञानी होय ऐसे भूलो हो यो असातावेदनीकर्म अपना अवसर पाय उदयम आय गया है अब जो कायर होय दीनताकरि रुदनविलापादि करते भोगोगे तो कर्म नाही छाडेगा कर्मके दया नाही होय है और धीरपनातैं भोगोगे तो कर्म नाही छाडेगा कोऊ देव दव दानव मन्त्र तन्त्र औषधादिक तथा स्त्री पुत्र मित्र बांधव सेवक सुभटादि उदयमें आयुकर्म हरनेकू समर्थ है नाही यो तुम अच्छी तरह समझो हो अब इस वेदनामें कायर होय अपना धर्म और यश और परलोक इनकू कैसे बिगाड़ो हो अर इनकू बिगाडि स्वच्छन्द चेष्टा विलापादि करनेतें वेदना नाही घटै है ज्यो ज्यो कायर हावोगे त्यों त्यों वेदना दुःख बढेगा । तातें अर साहस धारण करि परम धर्मका शरण ग्रहण करो । समारतें नरकके तथा तिर्यञ्चनिके क्षुधा तृषा रोग सताप ताडन मारण शीत उष्णादिक घोर दुःख असख्यात कालपर्यन्त अनेक

बार अनन्तभव धारणकरि भोगे ये तुम्हारे कहा दुःख है अल्पकालमैं निर्जरगा अर रोग वेदना देहकू मारेगा तुम्हारा चैतनस्वरूप आत्माकू नाही मारेगा। अर देह का मारना अवश्य होयगा जो देह धारण किया ताकै अवश्यम्भावी मरण है सो अब सचेत होहू यो कर्मका जीतवाको अवसर है अब भगवान पंचपरमेष्ठीका शरण ग्रहण करि अपना अजर अमर अखण्ड ज्ञाता दृष्टा स्वरूपका ग्रहण करो ऐसा अवसर फेरि मिलना दुर्लभ है इत्यादिक धर्मका उपदेश देय धर्ममैं दृढ करना अर अनित्यय असरणादि भावना ग्रहण शीघ्र करावना त्याग व्रतादिक छाडि दिये होय तो फिर ग्रहण करावना तथा शरीरका मर्दनादिक दुःख दूरि करना अर कोउ टहल करनेवाला नाही होय तो आप टहल करना अन्य साधर्मीनिका मेल मिलावना आहार पान औषधादि करि स्थितिकरण करना तथा मलमूत्रकफादिक होय तो धोवना पूछना इत्यादिक करि स्थिर करना तथा दारिद्र करि चलायमान होय तिनका भोजनपानादिक करि आजीविकादिक लगाय देनेकरि उपसर्ग परीषहादिक दूर करने करि सत्यार्थधर्ममैं स्थापना करना सो स्थितिकरण अङ्ग सम्यग्दृष्टिके होय है। बहुरि

वात्सल्यनामगुण सम्यग्दृष्टिके होय है ससारी जीवनिकी प्रीति तो अपने स्त्री पुत्रादिकनिमैं तथा इन्द्रियनिके विषय भोगनिमैं धनके उपार्जनमे बहुत रहै हैं जाके स्त्री पुत्र धन परिग्रह विषयादिकनिकू ससार परिभ्रमणके कारण जानि अन्तरङ्गमे वीतरागता धारणकरि जाकी धर्मात्मामैं रत्नत्रयके धारक मुनि अर्जिका श्रावक श्राविकामैं वा धर्मके आयतननिमे अत्यन्त प्रीति होय ताकै सम्यग्दर्शनका वात्सल्य अग होय है। बहुरि जो अपने मनकरि वचनकरि कायकरि धनकरि दानकरि व्रतकरि तप भक्तिकरि रत्नत्रयका प्रभाव प्रगट करै सो मार्ग प्रभावना अग है याका विशेष प्रभावना अगकी भावनामैं वर्णन करियेगा। ऐसे सम्यग्दर्शनके अष्ट अग धारण करनेतैं इनगुणनिका प्रतिपक्षी शकाकांक्षादिक दोषनिका अभावकरि दर्शन विशुद्धता होय है।

बहुरि लोकमूढता देवमूढता गुरुमूढताका परिणामनिकू छाँडि श्रद्धानकू उज्जल करना। अब लोक मूढताका स्वरूप ऐसा है जो मृतकनिका हाड नखादिक गगामैं पहुचानेमैं सुगति भई मानैं हैं तथा गगाजलकू उत्तम मानना तथा गगास्नानमैं अन्य नदीके स्नानमे नदीकी लहर लेनेमे धर्म मानना तथा मृतक भर्ताके साथ जीवती

स्त्री तथा दासी अग्निमें दग्ध हो जाय जाकू सती मानि पूजना मरयाकू पितरमानि पूजना पितरनिकू पातडीमें स्थापना करि पहरना तथा सुर्य चन्द्मा मगलादिक खेहनिकू सुवर्णरुपाका वनाय गलेमें पहरना तथा ग्रहनिका दोष दूरि करनेकू दानदेना सक्रान्ति व्यतिपात सोमोतो अमावसी मानि, दान करना सूर्यचन्द्माका ग्रहणका निमित्ततैं स्नान करना डाभकू शुद्ध मानना हस्तीके दतनिकू शुद्ध मानना कूवा पूजनो सूर्यचन्द्रमाकू अर्घ देना, देहली पूजना, मूसलकू पूजना, छींककू पूजना, विनायक नामकरि गणेश पूजना तथा दीपकको जोतिकू पूजना तथा देवताकी घोलारी नौलना अडूला चोटी रखना देवताको भेंटके करारतैं अपना सतानादिकका जीवन मानना सतानकू देवताका दिया मानना तथा अपने लाभ वास्ते तथा कार्य सिद्धि वास्ते ऐसी बीनती करे जो मेरे एता लाभ हो जाय तथा सतानोंका या रोग मिटि जाय तथा सतान हो जाय या वैरीका नाश हो जाय तो मैं आपके छत्र चढाऊ मकान बनाऊं इतना धद भैंट करु ऐसा करार करे हैं देवताकू साँक (हिरसत) देय कार्यकी सिद्धिके वास्ते वाछै हैं। तथा रात जगा करना कुलदेवकू

अत्यंत अभाव होय है ताके दर्शन विशुद्धता होय है सम्यग्दृष्टिके सांचा विचार ऐसा है हे आत्मन् या उच्च जाति है सो तुम्हारा स्वभाव नाही यह तो कर्मकी परिणमनि, पराकृत विनाशीक, कर्मनिके आधीन है। संसारमें अनेकबार अनेकजाति पाई, माताकी पक्षका जाति कहिये और जीव अनेकबार चांडालीके तथा भीलनीके तथा म्लेच्छणीके, चमारीके, धोबडिके, नायणिके, डूमणीके, नटनीके, वेश्याके दासीके कलालीके, धीवरी इत्यादि मनुष्यनिके गर्भमें उपज्या तथा सूकरी, कूकरी, गर्दभी, स्यालणी, कागली, इत्यादिकी तिर्यंचनिके गर्भमें अनंतबार उपजि मरया। अनंतबार नीचजाति पावे तब एक बार उच्चजाति पावे फिर अनंतबार नीच जातिपावै तब एकबार उच्चजाति पावै ऐसे उच्चजाति भी अनंतबार पाई तो हू संसारपरिभ्रमण ही किया, अर ऐसे ही पिताकी पक्षका कुल हू उच्चा नीचा अनंतबार प्राप्त भया संसारमें जातिका कुलका मद कैसें करिये? स्वर्गका महर्द्धिकदेव हू मरिकरि एकेन्द्री आय उपजै तथा स्वानादिक निन्द्य तिर्यंचनिमैं उपजै तथा उत्तमकुलका धारक होय सो चांडालमैं जाय उपजै तातैं जातिकुलमैं अहंकार करना मिथ्यादर्शन है। हे आत्मन्! तुम्हारा जातिकुल

या सिद्धनिके समान तुम आपामूलि मातारा रुचिर पिताको वीर्यतें उपजें जातिकुलमे मिथ्या -आपा धरि कर हू अनतकाल दिगोदराम मति करो। वोतरागका उपदेश ग्रहण कया तो इस देहकी जातिकूं हू सयम शील दया सत्यवचनादिकरि सफल करी जो मैं उत्तम जातिकुल पाय नोच कर्मीनिकेसे हिंसा असत्य परधन हरण कुशोलसेवन अभक्ष्य भक्षणादि अयात्य आचरण कैसे करु नाहीं करु ऐसा अहकार करना योग्य है सम्यग्दृष्टिके कर्मकृत पुदगलपर्यायमे कदाचित आत्मबुद्धि नाहीं होय है। बहुरि ऐश्वर्य पाय ताका मद कैसे करिये या ऐश्वर्य तो आपा भुलाय बहु आरम्भ राग द्वेपादिकमैं प्रवृत्ति कराय चतुर्गतिमैं परिभ्रमणका कारण है और निर्गथपना तीनलोकमे ध्यावने योग्य है पूज्य है अर यो ऐश्वर्य क्षणभगुर है बडे बडे इन्द्र अहमिन्द्रानिका पतनसहित है बलभद्र नारायणनिका ऐश्वर्य क्षणमात्रमे नष्ट हो गया अन्यजीवनिका ऐश्वर्य केतक है ऐसें जानि ऐश्वर्य दोय दिन पाया है तो दुखित जीवनिका उपकार करो विनयवान होय दान देहु परमात्मस्वरूप अपना ऐश्वर्य जानि इस कर्मकृत ऐश्वर्यमें विरक्त होना योग्य है। बहुरि रूपका मद मति करो यो विनाशीक पुद्गलको स्वरूप

नाहीं विनाशीक है क्षणक्षणमें नष्ट होय है इसरूपकू रोग वियोग दरिद्र महाकुरूप करेगा ऐसा हाडचामका रूपमैं रोगी होय मद करना बडा अनर्थ है इस आत्माकारूप तो केवल ज्ञान है जिसमें लोक अलोके सर्व प्रतिबिम्बित होय हैं तातैं चमडाका रूपमैं अपा छाडि अपना अविनाशी ज्ञान स्वरूपमैं नापाधारहू बहुरि श्रुतिका गर्वहू छाडहू आत्मज्ञान रहितका श्रुति निष्फल है जातैं एकादशअगनका ज्ञान सहित होय करकू अभव्य ससारहीमें परिभ्रमण करै है सम्यग्दर्शन विना अनेक व्याकरण छन्द अलङ्कार काव्य कोषादिक पढना विपरीत धर्मम अभिमान लोभम प्रवर्तन कराय संसार रूप अन्धकूपमे डुबोवनेके अर्थि जानहू और इस दरिद्रजनित ज्ञानका कहा गर्व है एकक्षणमे बातपीत्त कफादिकके घटने बधनेतें ज्ञान चलायमान होय जाय है अर इन्द्रियजनित ज्ञान तो इन्द्रायनिका विनाशीक साथ ही विनशेगा अर मिथ्याज्ञान तो ज्यों वर्धेगा त्यो खोटे काव्य खोटी टीकादिकनिकी रचनामैं प्रवर्तन कराय अनेक जनन्कू दुराचारमैं प्रवर्तन कराय डुबोयदेगा तातैं श्रुतका मद छांड़हु ज्ञान पाय आत्मविशुद्धता करहू ज्ञान पाय आज्ञानी कैसे आचरणकरि ससारमें भ्रमण करना योग्य नाहीं । बहुरि समकत्त्व विना

मिथ्यादृष्टिका तप निष्फल है- तपको मद करो हो जो मैं बडा तपस्वी हूं सो मदके प्रभावतैं बुद्धि नष्ट करिकैं यो तप दुर्गतिमैं परिभ्रमण करावैगा- तातैं तपका गर्व करना महा अनर्थ जानि भव्यनिकू तपका गर्वना योग्य नाही है । बहुरि जिस बलकरि कर्मरूप वैरीकू जीतिये तथा काम क्रोध लोभकू जीतिये सो बल तो प्रशसा-योग्य है अर देहका बल यौवनका ऐश्वर्यका बल पाय अन्य निर्बल अनाथ जीवनिकू मारि लेना धन खोसिलेना जमी जीविका खोसिलेना कुशील सेवन करना दुराचारमैं प्रवर्तन करना सो बल तो नर्क के घोर दु:ख असख्यात-काल भोगाय तिर्यचगतिमैं मारणता डनलादन करि तथा दुर्वचन तथा क्षुधा तृषादिकनिके दु:ख अनेक पर्यायनिमैं भुगताय एकेन्द्रियनिमैं समस्त बलरहित असमर्थ करैगा । तातैं बलका मद छाडि क्षमा ग्रहण करि उत्तमतपमैंप्र वर्तन करना योग्य है ।

बहुरि जे विज्ञान कहिये अनेक हस्तकला अनेक वचनकला अनेक मनके विकल्प जिनकरि-यो आत्मा चतुर्गतिरूप ससारमे परिभ्रमण करि दुःख भोगै है ते समस्त कुज्ञान हैं । इस ससारमे-खोटीकला चतुरताका बडा गर्व

है जो हमारा सामर्थ्य ऐसा है कहो तो सांचेकू झूठेकू साचा करिदेवैं कलक रहितकू कलकसहित करिदेवैं अदण्डनिकू दढ देने योग्य करि देवैं बहुत दिननिका सञ्चय किया हुआ द्रव्यकू कढ़ा लेवैं तथा धर्म छुटाय अन्यथा श्रद्धान कराय देवै तथा प्राणीनिके वशीकरण तथा अनेक जीवनिका मारण तथा अनेक जलमैं गमन करनेके, स्थलमें गमन करनेके, आकाशमैं गमन करनेके, अनेक यन्त्र वनायदेवैं इत्यादिक कलाचातुर्य है ते सब कुज्ञान है याका गर्व नरकके घोर दुःखका कारण है। कलाचातुर्य सम्यक् तो सो है जाते अपना आत्माकू विषयकषायके उलझाईतें सुलझावना तथा लोकनिकू हिंसा-रहित सत्यमार्गमैं प्रवर्तावना है, ऐसैं सत्यार्थ वस्तुका स्वरूप समझि जाति, कुल धन, ऐश्वर्यरूप, विज्ञानादिककू, कर्मके अधीन जानि इनका मद छांडि दर्शनविशुद्धता करो। ऐसें तीन मूढता और आठ शंकादिक दोष अर षट्अनायतन अर अष्टमद ऐसैं पचीस दोषका परिहार करि सम्यग्दर्शनकी उज्जलता होय है ऐसैं जानि दर्शनविशुद्ध भावनाही निरन्तर चिन्तवनकरि अर याहीकू ध्यान गोचरकरि स्तुति सहित उज्जलता होय है ऐसैं

जानि दर्शन विशुद्ध भावनाही निरन्तर चिन्तवनकरि अर याहीकूं ध्यानगोचर करि स्तुति महित उज्जल अर्घ उतारण करैं सो मुक्तिस्त्रीष सम्बन्ध करैं है। ऐसें दर्शन विशुद्धता नाम प्रथम भावना वर्णन करी ॥ १ ॥

अब आगैं विनयसम्पन्नता नाम दूजी भावना कहिये हैं सो—विनय पचप्रकार कह्या है दर्शनविनय, ज्ञान विनय, चरित्र विनय, उपचारविपय। तहां जो अपने श्रद्धानके शकादिकदोप नाहीं लगावना तथा सम्यग्दर्शन की विशुद्धताकरि ही अपना जन्म सफल मानना सम्यग्दर्शन के धारकनिमैं प्रीति धारना आत्मा अर परका भेद विज्ञानका अनुभव करना सो दर्शनविनय है। बहुरि सम्यग्ज्ञानके आराधनमैं उद्यम करना, सम्यग्ज्ञानकी कथनी मे आदर करना तथा सम्यग्ज्ञानके कारण अनेकांत रूप जिनसूत्र तिनके श्रवण पठनमैं बहुत उत्साहरूप होना तथा वन्दना स्तवनपूर्वक बहुत आदरतैं पढना सो ज्ञानविनय है तथा ज्ञानके आराधक ज्ञानीजनाका तथा जिनागमके पुस्तकनिका सयोगका बडा लाभ मानना सत्कार स्तवन आदरादिक करना सो ज्ञानविनय है। बहुरि अपनी शक्ति प्रमाण चारित्र धारणमैं हर्ष करना दिन दिन चारित्रकी

उज्वलताके अर्थि विषयकषायनिकू घटावना तथा चारित्र के धारकनिके गुणनिमें अनुराग स्तवन आदर करना सो चारित्रविनय है। बहुरि इच्छाकूं रोकि मिले हुए विषयनिमें संतोष धारणकरि ध्यानस्वाध्यायमें उद्यमी होय कामके जीतनेकू अर इन्द्रियनिके विषयनिमें प्रवृत्ति रोकनेकूं अनशनादिकतपमें उद्यम करना सो तपविनय है। बहुरि इन च्यारि अराधना का उपदेशकरि मोक्ष मार्गमें प्रवर्तन करावनेवाले हैं तथा जिनके स्मरण करनेतें परिणामनिका मल दूर होय विशुद्धता प्रगट हो जाय ऐसे पंचपरमेष्ठी के नामकी स्थापनाका विषय वन्दना स्तवन करना सो उपचार विनय है। अन्य हू उपचार विनय का बहुत भेद है अभिमानकू छाडि अष्टमदका अत्यन्त अभाव जाके होय कठोरता छूटि कोमलता जाके प्रगट होय ताके नम्रपना प्रगट होय है ताके सत्यार्थ ऐसा विचार है यो धन योवन जीवन क्षणभगुर है कर्मके आधीन है कोऊ जीव हमतें क्लेशित मति होहु सकल सम्बन्ध वियोग सहित है इहां केते काल रहूगा समय समय काल सन्मुख अखण्ड गमन करू हू कोऊ वस्तुका सम्बन्ध थिर है यहां विनय धर्म ही भगवान मनुष्य जन्मका

सार कह्या है यो विनय ससाररूप वृक्षके दग्ध करनेकूं आग्न हैं यो विनय है सो त्रैलोक्यवर्ती जीवनिके मन की उज्जलता है अर विनय है सो समस्त जिन शासनको मूल है विनमरहितके जिनेन्द्रकी शिक्षा ग्रहण नाही होय है विनय-रहित जीव समस्त दोषनिका पात्र है विनय है सो मिथ्याश्रद्धा-दानके छेदनेकू खल है विनय विना मनुष्यरूप चामडाको वृक्ष मानरूप अग्निकरि भस्म होय है अर मानकषायकरिके यहा ही घोर दु ख सहै है अर परलोकमे निन्द्यचाति कुलरूप बुद्धिहीन बलहीन उपजै है जे अभिमानी यहा किंचित वचनमात्र हू नाही सहै हैं ते तिर्यंचगतिमे नासिकामे मू जका जेवडाका बधन लादन मारण लात ठोकरोका घात चामडाका मरमस्थानमे घात पराधीन हुआ भोगे है तथा चाडालनिके मलीन घर मे बन्धनतें बन्ध रहे हैं जिन ऊपर मलादि निन्द्यवस्तु लादिये है और इस लोकमे हू अभिमानीके समस्त लोक वैरी हो जाय हैं अभिमानीकू समस्त निन्दै हैं महा अपयश प्रगट होय है समस्त लोक अभिमानी का पतन चाहै हैं मानकषायतें क्रोध प्रगट होाय कपट विस्तरै अतिलोभ करै दुर्वचननिमे प्रवर्तन करै कलोमे जेतो अनीति है तितनी मानकषायतें होय है। परधन

हरणादिक हू अपने अभिमान पुष्ट करनेकू करै है यातैं इस जीवका बडा वैरी मानकषाय है यातैं विनय गुणमैं महान आदरकरि अपना दोऊ लोक उज्जल करो सो विनय देवको शास्त्रको, गुरुनिको मन, वचन, कायतैं प्रत्यक्ष करो अर परोक्ष हू करो तहां देव जो भगवान अरहन्त समवशरण विभूति सहित गन्धकुटीके मध्य सिंहासन ऊपरि अन्तरीक्ष विराजमान चौसठ चमरनिकरि वीज्यमान छत्रयादिक प्रातिहार्यनिकरि विभूषित कोटिसूर्य समान उद्योत का धारकपरमौदारिकदेहमे तिष्ठता द्वादशसभाकरि सेवित दिव्य ध्वनिकरि अनेकजीवनिका उपकार करनेवाले अरहन्तको चिन्तवन करि ध्यान करना सो मनकरि परोक्षविनय है। याका विनय-पूर्वक स्तवन करना सो वचनकरि परोक्ष विनय है। अंजुलिजोडि मस्तक चढाय नमस्कार करना सो कायकरि परोक्षविनय है। बहुरि जो जिनेन्द्रको प्रतिबिम्बकी परम मुद्राकू प्रत्यक्ष नेत्रनितैं अवलोकन करि महा आनन्दतैं मनमें ध्यानकरि आपकू कृतकृत्य मानना सो मन करि प्रत्यक्षविनय है। जिनेन्द्रका प्रतिबिम्बके सन्मुख होय स्तवन करना सो प्रत्यक्ष वचनविनय है। अंजलि मस्तक चढाय वन्दना करना तथा भूमिमैं अंजुलिसहित मस्तक गोडानिका स्पर्शनकरि नमस्कार

करना सो कायकरि प्रत्यक्ष विनय है। तथा सर्वज्ञ वीतराग परमात्मा जिनेन्द्रका नामका स्मरण ध्यान वन्दना स्तवन करना सो समस्त परोक्षविनय है। ऐसैं देवका विनय समस्त अशुभकर्मनिका नाश करनेवाला कह्या है। बहुरि जो निग्रन्थ वीतरागी मुनीश्वरनिकूं प्रत्यक्ष देखि खडा होना आनद-सहित सन्मुख जानास्तवन करना वन्दना करना गुरुनिकूं आगैंकरि पाछै चलना कदाचित् बराबर चालना होय तो गुरुनिके बामतरफ चालना गुरुनिकूं अपने दक्षिण भागमे करकै चालना बैठना, गुरुनिकूं विद्यमान होते आप उपदेश नाहीं करना कोऊ प्रश्न करे तो गुरुनिके होते आप उत्तर नाही देना अर गुरुनिकी इच्छाके अनुकूल उत्तर देना गुरुनिके होते उच आसन नाही बैठना अर गुरु व्याख्यान उपदेशादिक करै ताकूं अजुलि जोडि बहोत आदरतैं ग्रहण करना गुरुनिका गुणनिमैं अनुराग करि आज्ञाके अनुकूल प्रवर्तन करना अर गुरु दूरक्षेत्रमैं होय तो ताकी जो आज्ञा होय तैसे प्रवर्तन करना दूरहीतैं गुरुनिकाध्यान स्तवन नमस्कारादि विनय करना सो गुरुका विनय है। बहुरि शास्त्रका विनय करना बडा आदरतैं पठन श्रवण करना द्रव्य क्षेत्र काल भावकूं व्याख्यानाद करना शास्त्रका कह्या व्रत सयमादिक आपतैं नाही बनि सकै तो आज्ञा

का लोप नाही करना सूत्रकी आज्ञा होय तिस प्रमाण ही कहना तथा जो सूत्रकी आज्ञा होय तार्‌ एकाग्रचित्ततैं श्रवण करना श्रवण करते अन्य कथा नाहीं करना आदरपूर्वक मौनतैं श्रवण करना अर जो सशय होय तो सशय दूर करनेकू विनयपूर्वक अल्प अक्षरनिकरि जैसे सभा कै अर लोकनिके अर वक्ताकै क्षोभ नाही उपजै तैसे नियमपूर्वक प्रश्न करना उत्तरकू आदरतैं अङ्गीकार करना सो शास्त्रका विनय है तथा शास्त्रकू उच्च आसनपर धरि नीचा बैठना प्रशसा स्तवन करना इत्यादिक शास्त्रका विनय करना ऐसे देव गुरु शास्त्रका विनय है सो धर्म का मूल है। बहुरि जो रागद्वेषकरि आत्माका घात जैसे नाहीं होय तैसे प्रवर्तन करना सो आत्माका विनय है जातैं ऐसा विचारे है अब यो मेरो जीव चतुर्गतिमे मति परिभ्रमण करो अब मेरा आत्मा मिथ्यात्व कषाय अविनयादिक करि ससार परिभ्रमणके दु ख मति प्राप्त होहू ऐसे चिन्तवन करना मिथ्यात्व कषाय अविनयादिक करि आत्माका ज्ञानादिक गुण घात नाही करना सो आत्माका विनय है यादीकू निश्चय विनय कहिये है यह तो परमार्थ विनय कह्या अर यहा ऐसा विशेष जानना जाकै मान कषाय घटि जाय ताहीके व्यवहार विनय है कोऊ जीवका मोतै अपमान मति होहू जो अन्यका सन्मान

करैगा सो आपहू सन्मानकू प्राप्त होयगा जो अन्यको अपमान करैगा सो आपहू अपमानकूं प्राप्त होय है नो समस्तकूं मिष्ट वचन बोलना सो विनय है किसी जीवकू तिरस्कारनाहीं करना सो हू विनय ही है। अपने घर आया ताका यथायोग्य सत्कार करना किसीकू सन्मुख जाय ल्यावना किसीकू उठि खडा होना एक हस्तकू माथे माथै चढावना किसीकू आइये २ इत्यादिक तीन वार कहि अंगीकार करना कोऊकू आदरकरि नजीक बैठावना किसीकू आसनदान देना किसीकू आवो, बैठो, किसीकू शरीरकी कुशल पूछना तथा हम आपके हैं हमकूं आज्ञा करिये भोजनपान करिये यह आपहीका गृह है ये गृह आपके आवनेतैं उच्च भया है आपकी कृपा हमारे पर सनातनतैं है ऐसे हू व्यवहार विनय है तथा कोऊकू हस्त उठाय माथे चढावना एता ही विनय है यह समस्त व्यवहारविनय है और हू दान सन्मान कुशल पूछना रोगी दुखीका वैयावृत्य करना सो भी विनयवानहीके होय है दुःखित मनुष्य तिर्यचननिकू विश्वास देना दुःखित होय आपका दुःख कहनेकू आया होय ताका दुःख श्रवण करना अपना सामर्थ्य प्रमाण उपकार करना नाहीं बननेका होय तो धीरता सतोषादिकका उपदेश देना ऐसे व्यवहार विनय है सो परमार्थ विनयका कारण है यशकू उप-

जावें है धर्मकी प्रभावना करै है मिथ्यादृष्टिका हू अपमान नाहीं करना मिष्टवचन बोलना यथायोग्य आदर सत्कार करना योहों विनय है महापापी द्रोही दुराचारीकू हू कुवचन नाहीं करना एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियादिक तथा सर्पादिक दुष्टजीव तिनकी विराधना नाही करना याकी रक्षाकरि प्रवर्तना सो ही इनका विनय है अन्यधर्मीनिका मन्दिरप्रतिमादिकनतें वेर करि निन्दा नाहीं करना ऐसा परमार्थ व्यवहार दोऊ प्रकारहू विनयको धारणकरि गृहस्थकू प्रवर्तन करना योग्य है। देखो सकलसग का परित्यागी वीतरागी मुनिश्वरहूकू कोऊ मिथ्यादृष्टि वन्दना करै ताकू आशीर्वाद न्हैं चाडाल भील धीवरादिक अधर्म जाति हू वन्दना करै ताकू पापक्षयास्तु इत्यादिक आशीर्वाद देहैं तातें विनयअग धारण करो हो तो बाल आज्ञान धर्मरहितका तथा नीच अधर्म जाति होय ताका हू विनय नाही करो तो हू तिरस्कार निन्दा कदाचित करना उचित नाहीं है इस मनुष्य जन्मका मण्डन विनय ही है विनय बिनो मनुष्यजन्मकी एक घडी भी हमारे मति जावो ऐसे भगवान गणधर देव कहैं हैं ऐसा विनयगुणकी महिमा जानि याका महान अर्घ उत्तारण करो। हे विनयसपन्नता अग हमारे हृदयमें तू ही निरतर वास करि तेरे प्रमादतें अब मेरा आत्मा कदाचित भ्रष्ट

मदनिकरि अभिमानकू मति प्राप्ति होहु ऐसे विनयसपन्नता नाम अंगकी दूजी भावना वर्णन करी ॥ २ ॥

अब तीसरी शीलव्रतेष्वनतीचार भावना कहै हैं :—शीलव्रतेष्वनतीचारका ऐसो अर्थ वार्तिकमें कया है अहिंसादिक पचव्रत अर इन व्रतनिका पालनके अर्थ क्रोधादिकपायका वर्जनादिकरूप शोलविपय जो मनवचन कायकी निर्दोप प्रवृत्ति सो शीलव्रतेष्वनतिचार भावना है शील नाम आत्म स्वभावका है आत्मस्वभावका नाश करनेवाला हिंसादिक पांच पाप हैं तिन मैं कामसेवन नाम एक ही पाप हिंसादिक समस्त पापनिकू पुष्ट करै है अर क्रोधादिकषायनिकी तीव्रता करै है तातैं यहां जयमालामें ब्रह्मचर्यकी ही प्रधानताकरि वर्णन करिये है यो शील दुर्गतिके दु खका हरनेवाला है स्वर्गादिक शुभगतिका कारण है तप व्रत सयमका जीवन है शील बिना तप करना व्रतधरना सयम पालना मृतकका अग समान देखने मात्र है कार्यकारी नाहीं तैसे शीलरहितका तप व्रत सयम धर्मकी निन्दा करानेवाला है ऐसा जानि शील नाम धर्मका अंगकू पालना करहु अर चचल मनरूप पक्षीकू थमो अतिचार रहित शुद्धशीलकू पुष्ट करो धर्मरूपवनके विध्वस करनेवाला मनरूप मदोन्मत्त हस्तीकू रोको चलायमान हुआ मनरूपहस्ती महान

अनर्थ कर हैं हस्ती मदवान होय तदि ठाणमेंतं निकसि भागै है अर मनरूपहस्ती कामकरि उन्मत्त होत तब समभावरूपी ठाणत निकलिभाग है तथा कुलकी मर्यादा मर्यादादि छाडि निकसे हैं मदोन्मत्तहस्ती तो सांकल तुडाय जाय हैं अर मनरूपहस्ती सुबुद्धिरूप साकल तोडि विचरं है हस्ती तो मार्ग में चलावनेवाला महावतकू नाखै है अर कामीका मन सम्यधर्मके मार्गमें प्रवर्तावनेवाला ज्ञानकू छांडे है हस्ती तो अंकुशकू नाही मानै है और इनरूपहस्ती गुरुनिके शिक्षाकारी वचनकू नाहीं माने है हस्ती तो महाफल अर छायाका देनेवाला वृक्षकू उखाडि पटकै है अर कामकरि व्याप्त मन है सो स्वर्गमोक्षरूप फल का देनेवाला अर यशरूप सुगन्धकू विस्तारता सकलविषयाकी आतापकू हरनेवाला ब्रह्मचर्यरूप वृक्षकू उखाडि डालै है हस्ती तो मल कर्दमादिक दूर करनेवाला सरोवरमें स्नानकरि मस्तक ऊपरि धूलि नाखता धूलिरजमें क्रीडा करै है और कामकरि व्याप्त मन सिद्धांत
करि अनेक अज्ञानरूप मलकू
क्रीडा करै है हस्ती तो
अर कामसयुक्त मन
धारण करै है हस्ती तो

कुबुद्धिरूप हस्तिनीमें रचे है हस्ती हू स्वच्छन्द डोलै मनहू स्वच्छन्द डोलै हस्ती तो मदकरिके मत्त है कामी का मन रूपादिक अष्टमदकरि मत्त है हस्ती के नजीक तो कोऊ पथिक नाहीं आवै दूर भागिजाय अर कामकरि उन्मत्तके नजीक कोऊ एकहू गुण नाही रहै है यातैं इस कामकरि उन्मत्त मनरूपी हस्तीकू वैराग्यरूप स्थमकै बाधो यो खुल्यो हुवो महा अनर्थ करैगा यो काम अनग है याकै अङ्ग नाहीं है यो तो मनजिस है मनहीमैं याका जन्म है ज्ञानकू मथन करनेवाला है याहीतैं याकू मनमथ कहिये है।

समरको अरि कहिये वैरी है यातैं समरारि कहिये है काम तैं खोटा दर्प जो गर्व सो उपजै है यातैं याकू कन्दर्प कहिये है या करि अनेक मनुष्य तिर्यंच परस्पर विरोधकरि मरि जाय हैं यातै याकू मार कहिये है याहीतैं मनुष्यनिमैं अन्य इन्द्रियन के भोग तो प्रगट हैं अर कामके अगहू ढके हुये है कामके अग का नाम हू उत्तमपुरुष हैं ते नाही उचारण करैं हैं यो समान अन्य पाप नाहीं है धर्मतैं भ्रष्ट करनेवाला काम है यो काम हरिहरब्रह्मादिकिकू भ्रष्टकरि आपके आधीन किये है याही तैं समस्त जगतकू जीतनेवाला एक काम है याका विजय करनेवाला मोहकू सहज ही जीते है याहोतैं कामके परिहारके अर्थि-

मनुष्यनी तथा देवांगना तथा तिर्यंचनी इनका समर्ग सगति कामविकारके उपजावनेवाली दूर हीतें परिहार करो स्त्रीनिमैं मन वचनकायकरि रागका त्याग करो आप कुशीलके मार्गमैं नाही चलना अन्यकू कुशीलके मार्गका उपदेश मति करो अन्य कोऊ कुशील के मार्गमैं प्रवर्तन करै तिनकी अनुमोदना भव्यजीव नाही करै है बालकास्त्रीकू देखि पुत्रीवत् निर्विकार बुद्धि करो अर यौवनरूप करीन्द्रऊपरि चढी लावण्य जो सौन्दर्यरूप जाका सब अग डुबि रह्या ऐसी रूपवतीस्त्रीमैं बहिणवत निर्विकार बुद्धि करहू अर वाकू सनमान दान मति करो। वचनकरि आलाप मति करो शीलवान हैं तिनकी दृष्टि स्त्रीनिमैं प्राप्ति होतें ही मुद्रित हो जाय है स्त्रीनिमैं वचनालाप करैगा स्त्रीके सगनिका अवलोकन करैगा ताकै शीलका भग अवश्य होयगा तातैं जो गृहस्थ है ताकै तो एक अपनी स्त्रीविना अन्यस्त्रीनिकी सगति तथा अवलोकन वचनालापकरि परिहार अर अन्य स्त्रीनिकी कथाका स्वप्नहूमैं विचार नाही रहै है अर एकान्तमैं माता बहन पुत्रीकी सगति हू नाहीं करे है अर मुनीश्वर तो समस्त स्त्रीमात्रका ही सम्बध नाहीं करे है स्त्रीनिमैं उपदेश नाही करै है जातें स्त्रीका नाम ही प्रगट दोषनिकू कहै है। स्त्रीसमान इस जीवकू नष्ट करनेवाला अन्य कोऊ अर कहिये

वैरी नाहीं तातें उत्तम पुरुष याकूं नारी कहै हैं दोष नकूं प्रत्यक्ष देखते देखते आच्छादन करे तातें याका नाम स्त्री है याका देखनेकरिपुरुष को पतन हो जाय तातें याका नाम पत्नी है कुमरण करने का कारण है तातें याका नाम कुमारी है याकी संगतकरि पौरुषबुद्धिबलादिक नष्ट हो जाय यातै याका नाम अबला है। संसारमें बंधका कारण है यातै याका नाम वधू है कुटिलतामायाचारका स्वभाव धारे है यातै याका नाम वामा है याका नेत्रनिमें कुटिलता बसै है यातै याका नाम वामलोचना है शीलवंतकूं इन्द्र नमस्कार करै है शीलवान पुरुष रत्नत्रयरूप धन लेय कामादिक लुटेरानिका भयरहित निर्भय निर्वाण पुरी प्रीत गमन करे हैं शीलकरि भूषित रूप-रहित होय तथा मलीन होय रोगादिककरि व्याप्त हो जाय तो हू अपना संसर्गकरि समस्त सभानिवाभावना वर्णण करि ॥ ३ ॥

अब अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नाम चौथी भावनाका वर्णन करैं हैं। भोआत्मन्! यो मनुष्यजन्म पाय निरन्तर ज्ञानाभ्यास ही करो ज्ञानका अभ्यासबिना एक क्षण ही व्यतीत मति करो ज्ञानके अभ्यास बिना मनुष्य पशु समान है यातैं योग्यकालमैं जिन आगमका पाठ करो अर समभाव होय शदि ध्यान करो अर शास्त्रनिके अर्थका चिन्तवन करो अर बहुत ज्ञानी गुरुजन

तिनमैं नम्रता वन्दना विनयादिक करो अर धर्म श्रवण करनेके इच्छुक तिनकू धर्मका उपदेश करो याहीकू अभीक्ष्णज्ञानोपयोग कहै हैं इस अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नामगुणका अष्टद्रव्यनि तैं पूजन करके याका अर्घ उतार करो अर पुष्पनिकी अजुली अग्रभाग निपेक्षेपण करो इहां ज्ञानोपयोग है सो चैतन्यकी परिणति है याहीत क्षणक्षणमैं निरन्तर चैतन्यकी भावना करना। मेरे अनादिकालतें काम क्रोध अभिमान लोभादिक संग लागि रहे हैं इनका सस्कार अनादितैं मेरे चैतन्यद्रव्यमें धुलि रहे हैं अब ऐसी भावना होहू जो भगवानके परमागमका सेवनका प्रभावतें मेरा आत्मा रागद्वेषादिकतें भिन्न अपना ज्ञायकस्वभाव रूपहीमैं ठहरि जाय अर रागादिकनिके वशीभूत नाहीं होय सो ही मेरी आत्माका हित है अथवा नवीनशिष्यनिके आगे श्रुतका अर्थको ऐसा प्रकाशकरना जो संशयादिक रहित शिष्यनिको हृदयमैं यथावत स्वपर पदार्थका स्वरूप प्रगट होनिकू मोहित करै है सुखित करै है। अर शीलरहित व्यभिचारी रूपकरि कामदेव समान है तो हू लोकनिमें धुथकार करिये है जातै याका नाम ही कुशील है शील नाम स्वभावका है कामी मनुष्य का शील जो आत्माका स्वभाव सो खोटा हो जाय यातैं याकू कुशील कहिये है। बहुरि कामी मनुष्य धर्मतें आत्माका

स्वभावत व्यवहारका शुद्धतात चरित्र है यातें याकू व्यभिचारी रहिये या समान जगमें अन्य कुकर्म नाहीं तातें कामकू कुकर्म रहिये है यातें मनुष्य पशुके समान हो जाय यातें याकू पशुकर्म कहिये ब्रह्म जो आत्मा ताका ज्ञानदर्शनादि स्वभाव ताका घात यातें होय है तातें याकू अब्रह्म कहिये है जातें कुशीलका सगतिते कुशीली हाय जाय है जो शीलकी रक्षा करी सो ही शांति तप व्रत संयम समस्त पाल्या। बहुरि जो अपना स्वभावतें नाही चलायमान होना ताकू मुनीश्वर शील कहे है अर नामका गुण समस्त गुणनिमें बडा है शील करि सहित पुरुषका तो थोडा हू व्रत तप प्रचुर फलकू फले है अर शीलविना बहुत हू तप व्रत है सो निष्फल हैं। इस प्रकार जानि अपने आत्मामें शीलको शुद्धताके अर्थि शीघ्रही नित्य पूजह यो शीलव्रत मनुष्य जन्महीमें है अन्यगतिमें नाहीं है तातें जन्म सफल किया चाहो तो शीलकी ही उज्वलता करा। ऐसें शीलव्रतेष्वनतीचार नाम तीसरी हो जाय पाप पुण्यका स्वरूप लोकअलोकका स्वरूप मुनिश्रावकका धर्मका स्वरूप सत्यार्थ निर्णय हो जाय तसें ज्ञानाभ्यास करना तथा अपने चित्तमें ससार देहभोगतें विरक्तता चिन्तवन करना। संसारदेह भोगनि

का यथार्थ स्वरूपका चिन्तवन करनेतैं राग द्वेष मोह ज्ञानकर विपरीत नाहीं करि सकै हैं। समस्त द्रव्यनिसे भिन्न हुआ हूं आत्माका भिन्न अनुभव करावै सो ही परमसंवर है ज्ञानाभ्यास करके विषयनिकी वांछा नष्ट होय है कषायनिका अभाव होय है माया मिथ्या निदान तीन शल्य ज्ञानके अभ्यास करिही नष्ट होय है ज्ञानके अभ्यास हीतैं मन स्थिर होय है ज्ञानके अभ्यास करकेही अनेक प्रकारके विकल्प नष्ट होय हैं ज्ञानाभ्यास करके धर्म ध्यानमें शुक्ल ध्यानमें अचल होय तिष्ठै है ज्ञानाभ्यासतैं ही व्रत संयमतैं चलायमान नाहीं होय है ज्ञानाभ्यास करकेही जिनेन्द्रका शासन (आज्ञा) प्रवर्तै है अशुभ कर्मका नाश है ज्ञानाभ्यास करकेही होय प्रभावना है जिनधर्मकी ज्ञानके अभ्यास करकेही होय ज्ञानका अभ्यासतै लोकनिका हृदयमैंतैं पूर्व संचय किया ऐसो पापरूप ऋण नष्ट होय जाय है अज्ञानी घोरतप करि कोटि पूर्वमें जिस कर्मकूं खिपावै तिस कर्मकूं ज्ञानी अन्तर्मुहूर्तमें खिपावै है जिनधर्मका स्तम्भ ज्ञानका अभ्यासही है ज्ञानहीके प्रभावतैं समस्त विषयनिकी वांछा रहित होय संतोष धारण करिये है ज्ञानहीतैं उत्तमक्षमादि गुण प्रगट होय

है ज्ञानागमत ही अभयअभक्ष्य योग्यअयोग्य ग्रहण करने योग्यका विचार होय है ज्ञान विना परमार्थ अर व्यवहार दोऊ नष्ट हो जाय है ज्ञानरहित राजपुत्रहूका निरादर होय है ज्ञान सम न कोऊ धन नाहीं है ज्ञानका दान समान कोऊ दान नाहीं है दुखित जीवकू सुखितकू सदा ज्ञानही शरणमें ज्ञानही स्वदेश में अन्यदेशमें आदर करावनेवाला परम धन है ज्ञानधनसो किसी किसी करि न हरयो जाय नाही किसीकू दिये घटे नाही ज्ञान ही सम्यग्दर्शन उपजावे है ज्ञानहीते मोक्ष होय है सम्यग्ज्ञान आतमा का अविनाशी स्वाधीन धन है ज्ञान विना संसार समुद्रमें डूबतेकू हस्तावलम्ब देय कौन रक्षा करे ? विद्या समान आभूषण नाहीं विद्या विना आभूरणमात्रते ही सत्पुरुषनिके आदरने योग्य होय नाहीं है निधनके परमनिधान प्राप्त करनेवाला इक सम्यग्ज्ञानही है याते हे भव्यजीवो ! भगवान करुणानिधान वीतराग गुरु तुमकू या शिक्षा करे है अपनी आत्माकू सम्यग्ज्ञानके अभ्यासही में लगावो अर मिथ्यादृष्टिनिकरि प्ररूप्या मिथ्याज्ञानका दूरिहीते परिहार करो सम्यक् मिथ्याकी परीक्षा करि ग्रहण करो अपना सतानकू पढावो अन्यजननिकू विद्या करावो जो धन होय अपने धनकू सफल करया चाहोहातो पढन पढावनेवालेकू आजीविका-

दिक उपकरि थिरता करवो पुस्तक लिखाय देवो निया पठनशालका करना पुस्तकानका शुद्ध करा करनो पठन पठनके अर्थि स्थान देनो निरन्तर पठन अभ्यास हा मनुष्य जन्मका काल व्यतीत करा या अवसर व्यतीत हा ता चलया जाय है जेते आयु काम इन्द्रिया बुद्धि बलि रही है तेते मनुष्य जन्मकी एक घडी हू सम्यग्ज्ञान बिना मति खावा ज्ञानरूपधन परलोकमे हू लार जायगा इस अभीक्ष्णज्ञान पयोगकी महिमा कहि जिह्वानि करि हू वर्णन नहीं करि सके है याहाते ज्ञाना पयोगको परमशरण अर्थि ग्रहण धनसहित हाय मो भावना भाय और अर्घ उतारण करि और गृहके त्यागी हाय ते निरन्तर भावना भावो अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नामा चौथी भावना वर्णन करा ॥ ४ ॥

अब पचमी सवेग भावनाका वर्णन करें हैं—जो ससार देह भोगनितें विरक्तता सा सवेग तथा धर्ममें अर धर्मका फल अनुराग सो सवेग है अथवा ससार देह भोगनितें विरक्त होय करि धर्ममें अनुराग करना सा सवेग है। इहा ससारमें जि पुत्रमू राग करिये है सा पुत्र जन्म लेत ही ता स्त्रीका यौवन सौन्दर्यादिक बिगाडै है अर जन्म हुवे पाछे बडो अ...

बडा कष्टकरि धनकू खरचकरि पुत्रकू बधावै हैं अर रोगादिकनिका बडा जावता अर क्षणक्षणमें बडो सावधानीतैं महामोही महारागी ग्लानिरहित होय बडा कष्ट सहिकरि बडा करिये है बडा होय तदि जाका भोजन अच्छा वस्त्र आछा आभरण आछा स्थानकू इठतैं ग्रहण करै है अरजो मूर्ख होय व्यसनी होय तीव्रकषायी होय ता रात्रिदिन क्लेश होनेका परिमाण नाहीं कहनेमें आवै है पुत्रके मोहतैं परिग्रहमें बडी मूर्छा बधै है अर समर्थ हो जाय अर अपनी आज्ञाम मन्द होय तो महा आर्तरूप हुआ मरणपर्यंत क्लेश नाहीं छांडै ओर जो पिताकू अपना कार्य करनेवाला समझै जेतैं प्रीति करै है असमर्थ होजाय तोसूं रा। नाहीं करै धनरहितका निरादर करै है यातैं पुत्रका स्वरूपकू समझि रागत्यागि परमधर्मसूं राग करो पुत्रके अर्थि अन्यायतैं धनादिपरिग्रहके ग्रहणका परित्याग करो। बहुरि स्त्री है सो मोह नाम ठगिकी महापापी है ममता उपजावनेवाली है तृष्णाकूं बधावनेवाली है स्त्रीमें तीव्रराग है सो धर्ममें प्रवृत्तिका नाश करै है लोभकू अत्यन्त बधावै है परिग्रहमें मूर्छा बधावै है ध्यानस्वाध्यायमें विघ्न करै है विषयनिमें अन्ध करनेवाली है क्रोधादिक च्यारों कषायनिकी तीव्रता करनेवाली है संयमका घात

करनेवाला है कलहादिमूल है दुर्ध्यानका स्थान है मरण निगा-
ननहारो है इत्यादिक दोषनिका मूलकारण जानि स्त्रीका संगम
रागभाव छांडि आतम धर्म अपना मान्य करो। बहुरि
कुमित्रनिका मित्र विषयनिमें उलझावन हारे हैं समस्त व्यस-
ननिमें सहकारी हैं धनहरन करैं हैं तिनतैं अनेक प्रकार
प्रकार विपदा करै हैं निर्धनका कोउ सम्भाषण हू नाहिं
करै है तातें भी धनोपार्जन हो जो समाधिपतनका भय है
तो अन्यसमस्ततैं मित्रता छांडि परमधर्मतैं अनुराग करो अर
संसार निरन्तर जन्म मरण रूप है पर जन्मअनन्त का मारणक
सन्मुख निरन्तर प्रयाण करै है अतीतानन्तकाल जन्ममरण करते
भया तातैं पंच परिवर्तनरूप संसारतैं विरागता भावो अर ये पंच
इन्द्रियनिके विषय हैं ते आत्माका स्वरूपके भुलावनेवाले हैं
तृष्णाके बधावनेवाले हैं अतृप्तिके करनेवाले हैं विषयनिकोंभी
आताप तैं लाखपन अन्य नाहीं है विषय हैं ते नरकादिक दुर्गति
के कारण हैं धर्मतैं पराङ्मुख करै हैं कषायनिके बधावनेवाले
हैं अपना कल्याण चाहै तिनकूं दूरहीतैं त्यागने योग्य हैं।
ज्ञानकूं विनाश करनेवाले हैं विषके समान मारनेवाले हैं विष
अर अभिमान दाहक उपजावनेवाले हैं तातैं विषयनितैं रागछांडना

ही परम कल्याण है अर शरीर है सो रोगनिका स्थान है महा-
मलीन दुर्गंध सप्तधातुमय है मलमूत्रादिककरि भरया है वातपित्त-
कफमय है पवनके आधीन हलन चलनादिक करै है सासता
क्षुधातृषाकरि वेदना उपजावै है समस्त अशुचिताका पुंज है दिन
दिन जीर्ण होता चल्या जाय है कोटिनि उपाय करते हू रक्षा
किया हुआ मरणकूं प्राप्त होय है ऐसा देहतैं विरागता ही श्रेष्ठ
है ऐसे पुत्र मित्र स्त्री संसार भोग शरीर का दुःख करनेवाला
स्वरूप जानि विरागपनाकूं प्राप्त होना सो संवेग है। संवेग भाव
बारंबार निरन्तर चिंतवन करना ही श्रेष्ठ है याते मेरे हृदयमें
निरन्तर संवेग भावना तिष्ठो ऐसा चिन्तवन करते संसार देह
भोगनितैं विरक्तता होय तदि परमधर्ममें अनुराग होय है।
धर्मशब्द का अर्थ ऐसा जानना जो वस्तु का स्वभाव है सो धर्म
है तथा उत्तमक्षमादि दशलक्षणरूप धर्म है तथा रत्नत्रयस्वरूप
धर्म है तथा जीवनिकी दयारूप धर्म है ऐसे पर्यायबुद्धि शिष्यनि
के समझावनेके अर्थि धर्मशब्दकूं च्यारिप्रकारकरि वर्णन किया
है सो हू वस्तु जो आत्मा ताका स्वभाव ही दशलक्षण है क्षमादि
दश प्रकार आत्माका ही स्वभाव है अर सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्र
हू आत्मातैं भिन्न नाहीं है और दया है सो हू आत्माही का
स्वभाव है सो ऐसा जिनेन्द्रकरि कह्या आत्माका स्वभावरूप दश

लक्षणधर्ममें जो अनुराग सो संवेग है अर कपटरहित चारित्र धर्ममें अनुराग करना सो संवेग धर्म है तथा मुनीश्वरनिका अर श्रावकका धर्मम अनुराग सो संवेग है तथा जीवनीका रक्षारूप जीवनिका दयारूप परिणाम होना सो भी प्रधान संवेग कह्या है अथवा वस्तुजो आत्मा ताका स्वभाव ज्ञानदर्शन सम्यग्दर्शन है तिस स्वभावमें लीन होना सो प्रशमा ऐसा ध्येय संवेग है जो धर्ममें अनुराग परिणाम सो संवेग है तथा धर्मका फलकू अत्यन्तमिष्ट जानना सो संवेग है ये तीर्थंकरपना चक्रवर्ती होना नारायण प्रतिनारायण बलभद्रादिक उपजना सो धर्महीका फल है तथा बाधारहित केवली होना तथा स्वर्गादिकनिमें महान ऋद्धिका धारक देव होना तथा इन्द्र होना तथा अनुत्तरादिक विमानमें अहमिन्द्र होना सो समस्त पूर्वजन्ममें आराधन किया धर्म का ही फल है बहुरि और हू जो भोगभूमिआदिकमें उपजना राजसम्पदा पावना अखण्ड ऐश्वर्य पावना अनेक देशनिमें आज्ञाधन प्रवर्तना प्रचुर सम्पदा पावना रूपकी अधिकता पावना बलकी अधिकता चतुरता महान पंडितपना सर्वलोकमें मान्यता निर्मलयशकी विख्यातता बुद्धिकी उज्वलता आज्ञाकारी धर्मात्मा कुटुम्बका संयोग होना सत्पुरुषनिकी संगति मिलना रोग

रहित होना दीर्घ आयु इन्द्रियनिकी उज्जलता न्यायमार्गमैं प्रवर्तना वचनकी मिष्टता इत्यादिक उत्तमसामग्रीका पावना है सो हू काऊ धर्ममैं प्रीति करी है तथा धर्मात्मानिका सेवन किया है धर्मका तथा धर्मात्मानिकी प्रशंसा की है ताका फल है। कल्पवृक्ष चिन्तामणि समस्त धर्मात्माके द्वारे खडे जानहू। धर्मके फलकी महिमा काऊ कोटि जिह्वानिकरि कहनेकू समर्थ नाहीं होइये है। ऐसे धर्मके फलकू त्रैलोक्यमें उत्कृष्ट जानै है ताकै संवेग भावना होय है। बहुरि धर्मसहित साधर्मीनिकू देखि आनन्द उपजना तथा धर्मकी कथनीमैं आनन्दमय होना और भोगनितै विरक्त होना सो संवेग नामा पंचमअङ्ग है याकू आत्माका हित समझि याकी निरन्तर भावना भावो अर भावना के आनन्दकरि सहित होय याकी प्राप्तिके अर्थि याका महार्घ उतारण करो। ऐसे संवेगनाम पंचम भावना वर्णन करी ॥ ५ ॥

अर शक्तिप्रमाणत्याग भावना वर्णन करिये है। त्यागनाम भावना प्रशंसायोग्य मनुष्य जन्मका मण्डन है। अपने हृदयमैं त्यागभाव रखने के अर्थि अनेक उत्तमरूप वादित्रनिकू बजाय याका महान अर्घ उतारण करो। बाह्य अभ्यंतर दोय प्रकार का परिग्रहतैं ममता छाडनेकरि त्यागधर्म होय है। अन्तरङ्ग परिग्रह चौदह प्रकार है सो ऐसे जानना। श्रद्धाविना ग्रहण त्याग वृथा है। मिथ्यात्व, अर स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसक वेदरूप परिणाम सो वेदपरिग्रह है। हास्य, रति, अरति,

शोक भय जुगुप्सा, राग, द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ ऐसे चौदह प्रकार अन्तरंग परिग्रह जनाया। तहां जो शरीरादिक परद्रव्यनिमैं आतमबुद्धि करना सो मिथ्यात्व नाम परिग्रह है। यद्यपि जो वस्तु है सो अपना द्रव्य अपना गुन अपना पर्याय है सो ही अपना स्वरूप है। जैसे सुवर्णनाम द्रव्य है सुवर्णके पीतादिक गुण हैं कुण्डलादि पर्याय हैं सो समस्त सुवर्ण ही हैं यातै सुवर्ण अन्यवस्तुका नाहीं अन्यवस्तु सुवर्णका नाहीं सुवर्ण है सो सुवर्णहीका है अन्य वस्तुका कोऊ हुआ नाहीं हो है नाहीं होयगा नाहीं अपना स्वरूप है सो ही आपका है ऐसैं आत्मा है सो आत्माहीका है आत्माका अन्य कोऊ ही द्रव्य नाहीं है। अब जो देहकू आपा मानै है जो मैं गोरा, मैं सांवला, मैं राजा, मैं रंक, मैं स्वामी, मैं सेवक, मैं ब्राह्मण, मैं क्षत्रिय, मैं वैश्य, मैं शूद्र, मैं वृद्ध, मैंबाल, मैं बलवान, मैं निर्बल, मैं मनुष्य मैं तिर्यंच इत्यादिक कर्मकृत विनाशीक परद्रव्यकृत पर्यायमैं आत्मबुद्धि करना सो मिथ्यात्वनाम परिग्रह है। मिथ्यादर्शनतैं ही मेरा गृह, मेरा पुत्र, मेरा राज मैं ऊंच, मैं नीच इत्यादिक मानि समस्त पर पदार्थनिमैं आत्मबुद्धिकरै है पुद्गलका नाशकू अपना नाश मानै है याके वधनेतैं अपना वधना घटनेतैं घटना मानि पर्यायमैं आतमबुद्धिकरि अनादिकालतैं आपा भूलि रहा है यातैं समस्त परिग्रहमैं आतमबुद्धिका मूल मिथ्यात्वनामपरिग्रह है जाकै मिथ्याग्यान नाहीं सो परद्रव्यनिमैं 'हमारा' ऐसैं कहता हुवा हू

परद्रव्यनिमें कदाचित् आपा नाहीं माने है। बहुरि वेदके उदय तैं स्त्रीपुरुषनिमें जो कामसेवनके परिणाम होय हैं तिस काममें तन्मय होय कामके भावकूं आत्मभाव मानना सो वेदपरिग्रह है। बहुरि धन, ऐश्वर्य, पुत्र, स्त्री, आभरणादि परद्रव्यादिकमें आसक्तता सो रागपरिग्रह है अन्यका विभव परिवार ऐश्वर्य पांडित्यादिक देखि वैरभाव करनासो द्वेषपरिग्रह है हास्यमें आसक्त होनासो हास्य परिग्रह है अपना मरण होनेतें मित्रनिका परिग्रहादिकनिकरि वियोग होनेतें निरन्तर भयवान रहनासो भय परिग्रह है पचइन्द्रियनिकरि वाछित भोगउपयोगके भोगनिमें लीन हो जाना सो रतिपरिग्रह है। अनिष्टवस्तुका संयोगमें परिणामनिका सक्लेशरूप होना सो अरति परिग्रह है अपना इष्ट स्त्रीपुत्रमित्रधनजीविकादिकका वियोग होते तिनका संयोगकी वाछा करके सक्लेशरूप होना सो शोक परिग्रह है। बहुरि घृणा-वान पुद्गलनिकू देखनेतें श्रवणतें चिन्तवनतें परिणाममें ग्लानि उपजना सो जुगुप्सा नाम परिग्रह है। अथवा अन्यका उदय देखि परिणाममें क्लेशित होना सुहावे नाहीं सो जुगुप्सा परिग्रह है। बहुरि परिणाम रोषकरि तप्त होनासो क्रोध परिग्रह है बहुरि उच्च कुल, जाति, धन ऐश्वर्य, रूप बल, ज्ञान बुद्धि इनकरि आपकूं अधिक जानि मद करना तथा परकूं घाटि जानि निरादर करना कठोर परिणाम रखनासो मानपरिग्रह है अनेक कपट-छलादिककरि वक्रपरिणाम रखनासो माया परिग्रह है। परद्रव्यनि

के ग्रहणमें तृष्णा सो लोभ परिग्रह है। ऐसें ममत्व परिणामनिके कारण आत्माके ज्ञानादिक गुणनिका घातक चौदह प्रकार अन्तरंग परिग्रह हैं अर इनहीतें मूर्छाके कारण धनधान्यरूपसुवर्णादिक स्त्रीपुत्रादिक चेतन अचेतन बाह्य परिग्रह हैं ऐसें अन्तरंग बहिरंग दोय प्रकारके परिग्रहका त्यागनेतें त्याग धर्म होय है। यद्यपि बाह्यपरिग्रहरहित तो दरिद्री मनुष्य स्वभावहीतें होय हैं परन्तु अभ्यन्तर परिग्रहका त्याग बहुत दुर्लभ है। यातें दोय प्रकारका परिग्रह एक देशत्याग तो श्रावकके होय है अर सकल-त्याग मुनीश्वरनिके होय है बहुरि कषायनिका त्यागतें त्याग धर्म होय है बहुरि इन्द्रियनिकूं विषयनितें रोकने करि त्याग होय है। बहुरि रसनिका त्यागकरि त्यागधर्म होय है। जातें रसना इन्द्रियकी लोलुपता जीतनेतें समस्त पापनिका त्याग सहज होय है।। बहुरि जिनेन्द्रका परमागमका अध्ययनका अन्यकूं अध्ययन करावना शास्त्रनिकूं लिखाय देना शोधना शुधावना सो परम उपकार करनेवाला त्यागधर्म होय है। बहुरि मनके दुष्टविकल्पनिका अभाव करना दुष्टविकल्पनिके कारण छांडि चारि अनुयोग की चर्चामें चित्त लगावना सो त्यागधर्म है। बहुरि मोहका नाश करनेवाला धर्मका उपदेश श्रावकनिकूं देना सो महापुण्यका उपजावनवाला त्यागधर्म है। वीतरागका उपदेशतें अनेकप्राणीनिका परिणाम पलटै समीचीन होय है धर्मके प्रभावकूं अनेक प्राणी प्राप्त होय हैं। बहुरि उत्तम

मध्यम जघन्य ऐसे तीन प्रकारके पात्रनिकूं भक्तिकरि युक्त होय आहारदान देना प्रासुक औषधि देना ज्ञानके उपकरण सिद्धांतके पढ़नेयोग्य पुस्तकका दान देना मुनिके योग्य तथा श्रावकके योग्य वसतिका दान देना गुणनिके धारकनिकूं तपकी वृद्धि करनेवाला स्वाध्यायमें लीन करनेवाला ध्यानकी वृद्धिका कारण आहारादिक चारि प्रकारका दान परम भक्तितैं विकसित चित्त हुआ अपना जन्मकूं कृतार्थ मानता गृहचाराकूं सफल मानता बड़ा आदरतैं पात्रदान करो। पात्रदान होना महाभाग्यतैं जिनका भला होना है तिनके होय है पात्रका लाभ होना ही दुर्लभ है और भक्तिसहित पात्रदान होय जाय ताकी महिमा करनेकूं कौन समर्थ है बहुरि क्षुधातृषितकरि जो पीडित होय तथा रोगी होय दरिद्री होय वृद्ध होय दीन होय तिनकूं अनुकंपाकरि दान देना सो समस्त त्यागधर्म है। त्यागहीतैं मनुष्य जन्म सफल है, त्यागहीतैं धनधान्यादिकका पावना सफल है त्यागबिना गृहस्थका गृह है सो स्मसान समान है अर गृहस्थका स्वामी पुरुष मृतक समान है और स्त्री पुत्रादिक गृद्धपक्षी समान हैं सो याका धनरूप मास चूटि चूटि खाय है ऐसें त्यागभावना वर्णन करी॥ ६॥ अब शक्तिप्रमाणतप भावना अङ्गीकार करना क्योंकि यो शरीर दुःखको कारण है। अनेक दुःख यो शरीर उपजावै है और या शरीर अनित्यमें अस्थिर अशुचि कृतघ्न-वत् कोटया उपकार करता हूं जैसैं कृतघ्न अपना नाहीं होय

हैं तैसें देहके नाना उपकार सेवा करता हू अपना नाहीं होय है यातें यथेष्ट विधिकरि नाहू पुष्ट करना योग्य नाहीं कृश करने योग्य है तो हू यो गुणकरत्नत्रयके संचयका कारण है शरीर विना रत्नत्रयधर्म नाहीं होय है सेवकको ज्यों योग्य भोजन देय यथाशक्ति जिनेन्द्रका मार्गतें विरोधरहित कायक्लेशादि तप करना योग्य है। तप विना इन्द्रियनिकी विषयनिमें लोलुपता घटे नाहीं तप विना त्रैलोक्यका जीतनेवाला कामकू नष्ट करने कू समर्थता होय नाहीं तप विना आत्माकू अचेत करनेवालो निद्रा जीती जाय नाहीं अर तपविना शरीरका सुखिया स्वभाव मिटे नाहीं जो तपके प्रभावतें शरीरकू साधि राख्या होय तो क्षुधा तृषा शीत उष्णादिक परीषह आवे कायरता उपजे नाहीं संयमधर्मतें चलायमान होय नाहीं तप है सो कर्मका निर्जराका कारण है। तातें तप ही करना श्रेष्ठ है। अपना वीर्यकू नाहीं छिपाय करिकैं जैसें जिनेन्द्रके मार्गतें विरोधरहित होय तैसें तप करो तपनाम सुभटका सहाय विना ये अपना श्रद्धान ज्ञानआचरणरूप धनकू काम क्रोध प्रमादादिक लुटेरे एकक्षणमें लूट लेयगे तदि रत्नत्रयसंपदाकरि रहित चतुर्गतिरूप संसारमें दीर्घ काल भ्रमण करोगे याहीतें जैसे वात पित्त कफ ये त्रिदोष निरोग होय रोगादिक नाहीं उपजावें तैसें तप करना उचित है समस्तमें प्रधान तपतो दिगम्बरपणा है कैसा है दिगम्बरपणा जो घरकी ममतारूपफासीकू छेदि देहका समस्त सुखियापणा

छाडि अपना शरीरतैं शीत उष्ण तावडा वर्षा पवन डाम मच्छर मक्षिकादिकनिकी बाधके जीतनेकूं सन्मुख होय कोपीनादिक समस्त वस्त्रादिकको त्यागकरि दशदिशारूपही जामैं वस्त्र हैं ऐसा दिगम्बरपणा धारण करना सो अतिशयरूप तप जानना जाका स्वरूपकू देखते श्रवण करते बडे बडे शूरवीर कम्पायमान हो जाय हैं तातैं भो शक्तिके प्रगट करनेवाले हो जो संसारके बन्धन से छूट्या चाहो तो जिनेश्वर सम्बन्धी दीक्षा धारण करो जातैं अंगका सुखियापणा नष्ट होय उपसर्गपरीषह सहनेमैं कायरताका अभाव होय सो तप है। जातैं स्वर्गलोककी रंभा अर तिलोत्तमा हू अपने हावभावविलासविभ्रमादिककरि मनकूं कामका विकारसहित नाहीं कर सकै ऐसा कामकू नष्ट करै सो तप है। जो दोय प्रकारके परिग्रहमें इच्छाका अभाव हो जाय सो तप है जो इन्द्रियनिके विषयनिमैं प्रवर्तनेका अभाव हो जाय सो तप है तप वही है जो निर्जनवन अर पर्वतनिका भयङ्कर गुफा जहां भूतराक्षसादिकनिके अनेकविकार प्रवर्तें अर सिंहव्याघ्रादिकनिके भयङ्कर प्रचार होय रहे अर कोट्या वृक्षनिकरि अन्धकार होय रह्या अर जहां सर्प, अजगर, रीछ चीता इत्यादिक भयंकर दुष्टतिर्यंचनिका संचार होय रह्या ऐसे महा विषमस्थान- निमैं भयरहित हुआ ध्यानस्वाध्यायमैं निराकुल हुवा तिष्ठै सो तप है। जो आहारका लाभ अलाभमैं समभावके धारक मीठा खाटा, कडवा, कषायला, ठण्डा, ताता, गरम, नीरस, भोजन

जलादिकमैं लालसारहित संतोषरूप अमृतका पान करते आनन्द में तिष्ठ सो तप है। जो दुष्ट देव दुष्ट मनुष्य दुष्टतिर्यंचनि करि किये घोर उपसर्गनिकूं आवते कायरता छाडि स्वरूपाचरणतें नाहीं हालिसो तप है। जातैं चिरकालका संचय किया कर्म निर्जरै सो तप है। बहुरि जो दुर्वचन कहनेवाले निंद्यदोष लगावनेवाले, ताडन, मारन अग्नि ज्वलनादि उपद्रव करनेवालेमैं द्वेषबुद्धिकरि कलुषित परिणाम नाहीं करना अर स्तुतिपूजनादि करनेवालेमैं राग भावका नाहीं उपजना सो तप है। बहुरि पंच-महाव्रतनिका अर पंचसमितिका पालन अरपंच इन्द्रियनिका निरोध करना अर छह आवश्यक समयका समय करना अपने मस्तकके डाढी मूछके केशनिकू अपने हस्ततें उपवासका दिन मैं उपाडना दोय महीना पूर्ण भये उत्कृष्ट लोंच है मध्यम तीन महीने गये लोंच करे जघन्य चार महीने गए लोंच करे है सो लोंच करना हू तप है अन्य भेषनिकी ज्यों रातीना केश नाहीं उपाडै है शीतकाल, ग्रीष्मकाल, वर्षाकालमैं नग्न रहना अर स्नान करनाही करना अर भूमिशयनकरि अल्पकाल निन्द्रा लेना दंतनिकू अंगुलिकरि हू नाहीं धोवना अर एकवार भोजन खडा भोजन रसनीरसस्वादकू छांडिकू भोजन करै ऐसे अट्ठाइस मूलगुण अखण्ड पालना सो बडा तप है इन मूलगुणनिके प्रभावतैं घातिया कर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानकू प्राप्त होय मुक्त हो जाय है। यातैं सो ज्ञानीजन ही धर्मका अंग यो तप है याकी निर्विघ्न

प्राप्तिके अर्थि याहीका स्तवन पूजनादिकरि याका महाअर्थ उतारण करा। यातें दूरि अर अत्यन्तपरोक्ष हू मोक्ष तुम्हारे अतिनिकटताकूं प्राप्त होय है, ऐसे शक्तितस्त्यागनामा सप्तमी भावनाका वर्णन किया ॥७॥ साधुसमाधि नामा अष्टमी भावनाकूं कहै है। जैसे भण्डारमें लागी हुई अग्निकूं गृहस्थ है सो अपना उपकारक वस्तुका नाश जानि अग्निकू बुझाये है क्योंकि अनेक वस्तुको रक्षा होना बहुत उपकारक है तैसे अनेक व्रतशीलादि अनेक गुनिकरि सहित जो व्रती सधर्मी तिनके कोऊ कारणतें विघ्न प्रगट होतें तिनकू दूरिकरि व्रत शीलकी रक्षा करना सो समाधि है। अथवा गृहस्थके अपने परिणामकूं बिगाडनेवाला मरण आ जाय उपसर्ग आ जाय रोग आ जाय इष्टवियोग हो जाय अनिष्टसंयोग आ जाय तदि भयकूं नाहीं प्राप्त होना सो साधु समाधि है। समाधानी ऐसा विचार करे हे आत्मन्! तुम अखण्ड अविनाशी ज्ञानदर्शन स्वभाव हो तुम्हारा मरण नाही जो उपज्या है सो विनशेगा पर्यायका विनाश है चैतन्य द्रव्यका विनाश नाहीं है पांच इन्द्रिय, अर मनबल, कायबल, वचनबल, आयुबल अर उस्वास ये दशप्राण है इनिका नाशकू मरण कहिये है। तुम्हारा ज्ञानदर्शन सुखसत्ता इत्यादिक भावप्राण हैं तिनका कदाचित् नाश नाहीं है तातें देह का नाशकूं अपना नाश मानना सो मिथ्याज्ञान है। भो ज्ञानिन्! हजारा कर्मनिकरि भर्या हाडमासमय दुर्गन्ध विना-

शोक देहका नाशहोतैं तुम्हारे कहा भय है तुम तो अविनाशी ज्ञानमय हो यो मृत्यु है सो बडा उपकारी मित्र है जो गल्या सड्या देहमैंतैं काढि तुमकू देवादिकनिका उत्तमदेह धारण करावै है मरण मित्र नाहीं होता तो इस देहमें केतेककाल वसता अर रोगका अर दुःखनिका भर्या देहतैं कौन निकासता अर समाधि मरणादिककरि आत्माका उद्धार कैसे होता अर व्रततपसंयमका उत्तमफल मृत्युनाम मित्रका उपकारविना कैसे पावता अर पापतैं कौन भयभीत होता अर मृत्युरूप कल्पवृक्षविना चारिआराधना का शरण ग्रहण कराय समाधिरूप कर्पतैं कौन काढता तातैं संसारमें जिनका चित्त आसक्त है अर देहकू अपना रूप जानै हैं तिनकै मरणका भय है सम्यग्दृष्टि देहतैं अपना स्वरूपकू भिन्न जानि भयकू प्राप्त नाहीं होय हैं तिनकै साधुसमाधि होय है अर जो मरणकै अवसरमें कदाचित रोगदुःखादिक आवै है सो हू सम्यग्दृष्टिकै देहमें ममत्व छुडावनेकै अर्थी है अर त्याग संयमादिककै सन्मुख करनेकै अर्थि है प्रमादकू छुडाय सम्यग्दर्शनादिक चारिआराधनामें दृढताकै अर्थि है अर ज्ञानी विचारै जो जन्म धार्या सो अवश्य मरणा तो कायर होऊंगा तो मरण नाहीं छाडैगा अर धीर होय रहूँगा तो मरण नाहीं छांडैगा तातैं दुर्गतिका कारण जो कायरतातैं मरणताकूं धिक्कार होहू अर ऐसा साहसतैं मरू जो देह मरि जाय अर मेरा ज्ञानदर्शनस्वरूपका मरण नाहीं होय ऐसे मरण करना उचित है

समस्त क्रिया पुण्यका बन्ध करनेवाली है सम्यग्दर्शन सहित होत
दि संसारका छेद करै सो ही अनुशासनम कहा है—

सम्बोधपृत्ततपसां पाषाणस्येव गौरवं पुंसः ।
पूज्य महामणेरिव तदेव सम्यक्त्वसंयुक्तं ॥ १ ॥

अर्थ—पुरुषके समभाव अर ज्ञान अर चारित्र अर तप इनका महानपणा पाषाणका महानपणाके तुल्य है अर ये ही जो समबोध चरित्र अर तप जो सम्यक्त्व सहित होंय तो महामणिकी तरह पूज्य हो जाय।

भावार्थ—जगतिम मणि है सो हू पाषाण है अर अन्य झाझडा पथ्थर है सो हू पाषाण है परन्तु पाषाण तो मण दोय मण हू बाधि ले जाय बेचे तो हू एक पैसो उपजै तातें एक दिन हू पेट नाहीं भरै अर मणि केई रती हू ले जाय बेचै तो हजारां रुपया उपजै समस्त जन्मका दारिद्र नष्ट हो जाय तैसें समभाव अर शास्त्रनिका ज्ञान अर चारित्रधारण अर घोर तपश्चरण ये सम्यक्त्वबिना बहुतकाल धारण करे तो राज्यसम्पदा पावै तथा मन्दकषायके प्रभावतें देवलोकम जाय उपजै फिर एक इन्द्रियादिक पर्यायनिमें परिभ्रमण करै अर जो सम्यक्त्व सहित होय तो संसार परिभ्रमणको नाशकरि मुक्त हो जाय-तातैं सम्यक्त्वबिना मिथ्यादृष्टि है सो जिनकू पूजो वा गुरु वन्दना करो समवसरणमें जावो श्रुतका अभ्यास करो तप करो तो हू अनन्तकाल संसार

धाम हो करैगा इस तीन भवमे सुख दु खको समस्त सामग्री यो जोर अनन्ताचार पाई कोऊ दुलभ नाही एक साधुसमाधि जो रत्नत्रयका लब्धिकू निर्विघ्न परलोकताई ले जाना है सो रत्नत्रय सहित हुआ देहकू छाडे है तिनके साधुसमाधि होय ताका पावना ही दुर्लभ है साधु समाधि है सो चतुर्गतिनिमे परिभ्रमण के दु खका अभावकरि निश्चल स्वाधान अनन्तसुखकू प्राप्त करै है जो पुरुष साधुसमाधि भावनाकू निर्विघ्न प्राप्त होनेकू अर्थि इस भावनाकू भावता याका महान अर्घ उतारण करै सो ही शीघ्र ससार समुद्रकू तिरि अष्टगुणनिका धारक सिद्धि होय है ऐसे साधुसमाधिनामा अष्टमीभावना वर्णन करी ॥ ८॥ अब वैयावृत्तिनामा नवमी भावनाका वर्णन करिये है। कोठा अर उदरकी व्यथा जो आमवात सग्रहणी कठोदर सफोदर नेत्रशूल कर्णशूल शिरःशूल दन्तशूल तथा ज्वर कास स्वास जरा इत्यादिक रोगनिकरि पीडित जे मुनि तथा श्रावक तिनकू निर्दोष आहार औषधि वस्तिकादिक करि सेवा करना तिनकरि शुश्रूषा करना विनय करना आदर करना दुःख दूरि करनेमें यत्न करना सो समस्त वैयावृत्य है जे तपकरि तप्त होंय अर रोगकरि युक्त जिनका शरीर होय तिनके वेदना देखकर तिनके अर्थि प्रासुक औषधि तथा पथ्यादिककरि रोगका उपशम करना सो नवमा वैयावृत्य मुनीश्वरनिके दशभेद करि दश प्रकार है। आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष्य, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ

इनदश प्रकारके मुनीश्वरनिके परस्पर वैयावृत्य होय है कायकी चेष्टाकरि वा अन्यद्रव्यकरि दुःख दूर करनेकरि उपकार करिवे प्रवर्तन करिये सो वैयावृत्य है। इन दश प्रकारके मुनिन का स्वरूप ऐसा जानना जिनते स्वर्गमोक्षके सुख होय ऐसे व्रत तिनकूं आदर सहित ग्रहण करिके भव्यजीव आप हितके अर्थि आचरण करें ते सम्यग्ज्ञानादिगुणनिके धारक आचार्य हैं। भावार्थ—जिनकूं मोक्षके स्वर्गके साधक व्रत आचरण करिये ते आचार्य हैं जिनके समीपकूं प्राप्त होय आगमकूं अध्ययन करिये ते व्रत शीलश्रुतके आधार ऐसे उपाध्याय हैं महान् अनशनादि तपमें तिष्ठे ते तपस्वी हैं जे श्रुतके शिक्षणमें तत्पर निरन्तर व्रतनिका भावनामें तत्पर ते शैक्ष्य हैं रोगादिककरि जाका शरीर क्लेशित होय सो ग्लान है वृद्धमुनिनिकी परिपाटीका होय सो गण है आपकूं दीक्षा देनेवाला आचार्यका शिष्य होय सो कुल है, च्यारप्रकारके मुनिका समूह सो संघ है चिरकालका दीक्षित होय सो साधु है जो पण्डितपणेकरि वक्तापणेकरि ऊंचे कुलकरि लोकनिमें मान्य होय धर्मका गुरु कुलका गौरवपणा का उद्योत करनेवाला होय सो मनोज्ञ है अथवा असंयतसम्यग्दृष्टि हू संसारका अभाव रूपकरि मनोज्ञ है। इन दश प्रकारकेनिकूं रोग आ जाय परीषहनिकरि खेदित होय तथा श्रद्धानादि बिगडि मिथ्यात्वादिक प्राप्त हो जाय तो प्रासुक औषधि भोजन पान योग्य स्थान आसन काष्ठफलक तृणादिकनिका

सम्स्तरादिकनिकरि अर पुस्तक पीछिकादिक धर्मोपकरणकरि जो प्रतिकार उपकार करिये तथा सम्यक्तविषैं लेरि स्थापन करिये इत्यादि उपकार सो वैयावृत्त है। अर जो प्रासु भोजन पान औषधादिक नाहीं सम्भवते होय तो कायकरिकै कफ तथा नासिकामल मूत्रादि दूर करनेकरि तथा उनके अनुकूल आचरण करनेकरि वैयावृत्य हुय है इस वैयावृत्तमैं संयमका स्थापन ग्लानिको अभाव अर प्रवचनमैं वात्सल्यपणो अर सनाथपणा इत्यादि अनेक गुण प्रगट होय है वैयावृत्यही परम धर्म है वैयावृत्य नाहीं होय तो मोक्षमार्ग बिगडि जाय आचार्यादिक कहैं ते शिष्य मुनि तथा रोगी इत्यादिकका वैयावृत्त करनेतें बहुत विशुद्धता उच्चताकू प्राप्त होय है ऐसे ही आचार्यादिक मुनिका वैयावृत्य करै तथा श्रावक धनिकाका करै औपधदानकरि वैया-वृत्य करै अर भक्तिपूर्वक युक्तिकरि देहका आकार आहारदानकरि वैयावृत्य करै अर कर्मकै उदयतैं दोष लगि गया होय ताका दाखना तथा श्रद्धानकू चलायमान भया होय ताकू सम्यग्दर्शन ग्रहण करावना यथा जिनेन्द्रके मार्गकू चलि गया होय ताकू मार्गमैं स्थापन करना इत्यादिक उपकारकरि वैयावृत्त है। बहुरि जो आचार्यादि गुरु शिष्यकू श्रुतका अर्थ पढावैं तथा व्रत संय-मादिककी शुद्धिका उपदेश करै सो शिष्यका वैयावृत्त है। अर शिष्यहू गुरुनिकी आज्ञा प्रमाण प्रवर्तना गुरुनिका चरणनिका सेवन करै सो आचार्यका वैयावृत्त है बहुरि अपना सामर्थ्य-रूप आत्माकू रागद्वेषादिक दोषनिकरि लिप्त नाहीं होने देना सो

अपने आत्माका वैयावृत्य है तथा अपने आत्माकू भगवानके परमागममें लगाय देना तथा दशलक्षणरूप धर्ममें लीन होना सो अन्तर्वैयावृत्य है। तथा काम क्रोध लाभादिकके अर्थ अर इन्द्रियनिके विषयनिके आधीन नाहीं होना सो अपना आत्माका उपकार है। बहुरि इ जार हू विशेष जानना जो रोगी मुनिका तथा गुरुनिका पाप काल अर अवगणते शयन आसन कमण्डलु पीछी पुस्तक नेत्रनिकू देखि मयूरपाच्छितकाल शोधना तथा अपकरागी मुनिका आहार औषधादि करि संयमके योग्य उपकार करना तथा शुद्ध ग्रन्थनिके वाचनेकरि धर्मका उपदेशकरि परिणामकू धर्ममें लीन करना तथा उठावना बैठावना मलमूत्र करावना कराइ लिवाना इत्यादिककरि वैयावृत्य करै तथा कोऊ साधु मार्गकरि खेदित होय तथा भील म्लेच्छ दुष्टराजा दुष्टतिर्यंचनिकरि उपद्रवरूप हूवा होय दुर्भिक्ष मारि व्याधि इत्यादिक उपद्रवकरि पाडा होनेतैं परिणाम कायर भया होय ताकू स्थान क्षेत्र कुशल पूछकरि आदरकरि सिद्धान्ततैं शिक्षाकरि स्थिरनिकरण करना सो वैयावृत है। बहुरि जो समर्थ होय करकैं हू अपना बलवीर्यकू छिपाय वैयावृत्य नाहीं करै है सो धर्मरहित है। तीर्थकरनिका आज्ञाभंग करी श्रुतिकरि उपास्या धर्मकी विराधनाकरि आचार बिगड्या प्रभावना नष्ट करा धर्मात्माकी आपदामें उपकार नाहीं किया तदि धर्मतैं पराङ्मुख भया श्रुतकी आज्ञा लोपनेतैं परमागमतैं पराङ्मुख भया अर जाके ऐसा परिणाम होय जो जहां मोह अधिककरि दूर होता जगतमें एक

निग्रन्थ मुनि ज्ञानरूप जल करि मोहरूप अग्निकूं बुझाय आत्मक-
ल्याणकूं करे हैं धन्य हैं, जे कामकूं मारि रागद्वेषका परिहार करि
इन्द्रियनिकूं जीत आत्माके हितमें उद्यमी भए हैं ते लोकोत्तर
गुणनिकूं धरैं हैं मेरे ऐसे गुरुनिके चरणनिका ही शरण
होहु ऐसे गुरुनिमें परिणाम यथार्थरूप ही होय है अर जैसे २
गुरुनिमें परिणाम राचै है तैसे २ श्रद्धान बधै है श्रद्धान बधे तदि
धर्ममें प्रीति बधै तदि धर्मके नायक अरहन्तादिक पंच परमेष्ठीके
गुणनिमें अनुरागरूप भक्ति बधै है ऐसीक भक्ति होय है जो
मायाचार रहित मिथ्याज्ञान रहित भोगनिकी वांछा रहित अर
हेरना रहित निष्कम्प अचल ऐसी जिन भक्ति जाकै होय ताके
संसारके परिभ्रमणका भय नाहीं रहै है सो भक्ति समात्माकौ
वैयावृत्त होय है। बहुरि पंच महाव्रतनिकरि युक्त अर कषाय
दूरि रहित रागद्वेष रहित जीवनिका अज्ञानरूप रत्ननिका निधान
ऐसा पात्रका लाभ वैयावृत्य करनेवालेके होय है जो रत्नत्रयधारी
का वैयावृत्य किया सो रत्नत्रयकूं अपना जोड़ करि आपकूं अर
अन्यकूं मोक्षमार्गमें धार्या है। बहुरि वैयावृत्य अन्तरंग बहि-
रंग दोऊ तपनिमें प्रधान कर्मकी निर्जराका प्रधान कारण है जो
आचार्यका वैयावृत्य कीया सो समस्त संघका स्व धर्मका बाधा
दूर कीया भगवानकी आज्ञा पाली अर आपके अर परके संयम
की रक्षा शुभध्यानादिक वृद्धि अर इन्द्रियनिका निग्रह किया।
रत्नत्रयकी रक्षा अर अतिशयरूप दान किया निर्विचिकित्सा गुण
प्रगट दिखाया जिनेन्द्रधर्मकी प्रभावना करी धन खरचना सुलभ

है रोगीकी टहलकरना दुर्लभ है रागादिक दूर करनादुर्लभ है अन्य का औगुण ढाकना गुण प्रगट करना इत्यादिक गुणनिकै प्रभावतें तीर्थंकर नाम प्रकृतिका बंध करे है या वैयावृत्य जगतमैं उत्तम ज्यों जिनेन्द्रका गिरा है जो श्रावक या साधु वैयावृत्य करै है सो मनोवांछित निर्वाणसुख पावै है बहुरि जो अपना साम र्थ्यप्रमाण छ कायका आरम्भनिकी रक्षामैं सावधान है ताकै समस्त प्राणीनिका वैयावृत्य होय है ऐसे वैयावृत्य नाम नवमी भावना वर्णन करी ॥९॥

अर अरहन्त भक्ति नाम दशमी भावना वर्णन करूं हूं। जो मनवचनकाय करिकै जिन ऐसे दोय अक्षर सदाकाल स्मरण करै है सो अरहन्त भक्ति है।

भावार्थ—अरहन्तमें गुणनिमें अनुराग सो अरहन्त भक्ति है जो पूर्वजन्ममें षोडशकारण भावना भाई है सो तीर्थंकर होय अरहन्त होय है ताके तो षोडशकारण नाम भावनातैं उपजाया अद्भुतपुण्य ताके प्रभावतैं गर्भमें आवनेके छह महीने पहली इन्द्र की आज्ञाते कुबेर है सो बारह योजन लम्बी नवयोजन चौड़ी रत्न मय नगरी रचै है तिसके मध्य राजाकै रहनेका महलनिका वर्णन अर नगरीकी रचना अर बड़े द्वार अर कोट खाई पड़काटि इत्यादिक रत्नमय जो कुबेर रचै है ताकी महिमा तो कोऊ हजार जिह्वानिकरि वर्णन करनेकू समर्थ नाहीं है तथा तीर्थंकरनिके माता का गर्भका शोधना अर रुचकद्वीपादिकमें निवास करनेवाली

छप्पन कुमारिका देवी माताकी नाना प्रकारकी सेवा करनेमें सावधान होय हैं अर गर्भके आवनेके छह महीना पहली प्रभात मध्याह्न अर अपराह्न एक एक कालमैं आकाशतैं रतननिकी वर्षा कुवेर करै है अर गर्भमें आवतेंही इन्द्रादिक च्यारि निकायके देवनिका आसन कंपायमान होनेतें च्यारि प्रकारके देव आय नगरकी प्रदक्षिणा देय मातापिताकी पूजा सत्कारादिकरि अपने स्थान जाय हैं अर भगवान तीर्थंकर स्फटिक मणिका पिटारा समान मलादिरहित माताका गर्भमें तिष्ठै हैं अर कमलवासिनी छह देवी अर छप्पन रुचिकद्वीपमें वसनेवाली अर और अनेक देवी माताकी सेवा करै हैं अर नवमहीना पूर्ण होतैं उचित अवसरमें जन्म होतेही च्यारो निकायके देवनिका आसन कम्पायमान होना अर वादित्रनिका अकस्मात बाजनेतें जिनेन्द्रका जन्म जानि बडा हर्षतें सौधर्म नामा इन्द्र लक्ष योजन प्रमाण ऐरावत हस्ती उपरि चढि अपना सौधर्म स्वर्गका इकतीसमां पटलमें अठारवा श्रेणीबद्ध नाम विमानतें असंख्यातउन अपने परिकरनि करि सहित साढा बाराकोडि जातिका वादित्रनिकी मिष्टध्वनि अर असंख्यात देवनिका जयजयकार शब्द अर अनेक ध्वजा अर उत्सवसामग्री अर कोट्या अप्सरादिका नृत्यादिक उत्सव अर कोट्या गंधर्वदेवनिका गानकरि सहित असंख्यात योजन ऊंचा इहातैं इन्द्रका रहनेका पटल और असंख्यात योजन तिर्यक् दक्षिणादिशामें है तहातें जम्बूद्वीप पर्यन्त योजन उल्लंघन करते आय नगरकी प्रदक्षिणा देय इन्द्राणी प्रसूतिगृहमें जाय माताकूं माया-

निद्राकै वशिकरि विनाश न पाक भयते अपना न्द्रशक्ति ताै बालक और रचि तार्थकरक ताै भक्तिकै न्याय इन्द्रक हाथ है तिसमाल्ये दखता इन्द्र तपत्र कू नाना प्राप्त होता हजार नेत्र रचिकरि दखै है फिर तहां ईशानादिक स्वर्गनिके इन्द्र अर भवन वासी व्यतर ज्योतिर्यानिक इन्द्रादिक असंख्य तद्वा अपना अपना सेना वाहन परिवार सहित आवै है। तहां सौधर्म इन्द्र ऐरावति हस्ती ऊपरि चढ़ाय भगवानक गोदम लेय चलै तहां ईशानेन्द्र छत्र धारण करै अर सनत्कुमार माहेन्द्र चमर ढारते अन्य असंख्यातदव अपने अपने नियोगम माफक बड़ा उत्सवस मेरुगिरिका पाडुकवनम पाडुकशिलाऊपरि अकृत्रिम अहिमन है तिसऊपरि जिनेन्द्रकू पधराय अर पाडुकवनतै क्षीर समुद्र पर्यन्त दोऊ तरफ दवौंका पक्ति बना जाय है सो क्षीर समुद्र मेरुतै भूमित पाँचकोड दशलाख साढ़ेगुणचास हजार योजन परे है तिम अवसरम मेरुकी चूलिकातै दोऊ तरफ मुकुट कुन्डल हार कंकणादि अद्भुत रत्ननिके आभरण पहरे देवनिकी पक्ति मेरु की चूलिकात क्षीरसमुद्र पर्यंत श्रेणी बन्ध है अर हाथ हाथ कलश सौंपै है तहा दोऊ तरफ इन्द्रक खडे रहनेके जोग दोय छोटे सिंहासन ऊपरि ईशान इन्द्र कलश लय अभिषेक एक हजार आठ कलशनिकरि करै है तिन कलशनिका मुख एक योजनका उदर छरियोजन चौडा आठ योजन ऊंचा तिन कलशनित निरमल धारा भगवानक वज्रमय शरीर ऊपरि पुष्पनि की वर्षा समान जाय नाहा करै अर पाछै इन्द्राणी कोमल

पश्चात् पूछ अपना जन्मकू कृतार्थ मानतो स्वर्गतें ल्याये रत्नमय समस्त आभरण वस्त्र पहरावे है तहां अनेक देव अनेक उत्सव विस्तारें तिनकू लिखनेकू कोऊ समर्थ नाहीं फिर मेरु गिरितें पूर्ववत् उत्सव करते जिनेन्द्रकू ल्याय समर्पण करि इन्द्र बहुत ताण्डवनृत्यादिक जो उत्सव करे है तिन समस्त उत्सवनिकूं कोऊ असंख्यातकाल पर्यन्त कोटि जिह्वानिकरि वर्णन करनेकू समर्थ नाहीं है। जिनेन्द्र जन्मतें ही तीर्थंकर प्रकृतिके उदयके प्रभावतें दश अतिशय जन्मतें लिये ही उपजे हैं पसेवरहित शरीर होय, मलमूत्र कफादिक रहितपना, अर शरीरमें दुग्धवर्ण रुधिर समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवृषभनाराचसंहनन अप्रमाणरूप, महासुगन्ध शरीर अप्रमाणबल एक हजार आठ लक्षण, प्रियहितमधुरवचन ये समस्त पूर्वजन्ममें षोडश कारण भावना भाई ताका प्रभाव है बहुरि इन्द्र अंगुष्ठमें स्थाप्या अमृत ताकू पान करता माताका स्तनतें उपज्या दुग्धपान नाहीं करे है फिर अपनी अवस्थाकू समान बने देवकुमारनिमें क्रीडा करते वृद्धिकू प्राप्त होय है अर स्वर्गलोकतें इन्द्र आभरण वस्त्र भोजनादिक मनवांछित देय लीयें पावता रात्रिदिन हाजिर रहे है पृथ्वीलोकका भोजन आभरण वस्त्रादिक नाहीं अङ्गीकार करे है स्वर्गतें आये ही भोगे है। बहुरि कुमारकाल व्यतीत करि इन्द्रादिकनिकरि कीने अद्भुत उत्साह करि भक्तिपूर्वक पिताकरि समर्पण कीया राज्य भोगि अवसर पाय संसार देह भोगनितें विरागता उपजे तदि अनित्यादिक बारह भावना भावने

होते लोकांतिकदेव जाय वन्दना स्तवनरूप सम्बोधनादिक करे हैं अर जिनेन्द्रका विराग भाव होतेही चारिनिकायके इन्द्रादिकनिके अपने आसन कम्पायमान होनेतें जिनेन्द्रके तपका अवसर अवधि ज्ञानतें जानि बडे उत्सवतें जाय अभिषेककरि कल्पवृक्षके वस्त्रा भरणतें भक्तितें भूषितकरि रत्नमयी पालकी रचि जिनेन्द्रकू चढाय अप्रमाण उत्सव अर जय जयकार शब्दसहित तपके योग्य वनमें जाय उतारें तहां वस्त्र आभरण समस्त त्याग देय अधर शिलि मस्तक चढाय अर पचमुष्टी लोच सिद्धनिकू नमस्कारकरि करें तदि केशनिकू महा उत्तम जानि इन्द्र रत्ननिके पात्रमें धारणकरि क्षीरसमुद्रमें बडी भक्तितें क्षेपें हैं जिनेन्द्र अनेक कालमें तपके प्रभावतें शुक्लध्यानके प्रभावतें क्षपक श्रेणीमें घातिया कर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानकूं उत्पन्नकरें हैं तदि अरहन्त नाम प्रगट होय है तदि केवलज्ञानरूप नेत्र करि भूत भविष्यत वर्तमान त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्यनिकी अनन्तानन्त परणतिसहित अनु क्रमतें एक समयमें युगपत समस्तकूं जानें हैं देखें हैं। तदि च्यारिनिकायके देव ज्ञानकल्याणकी पूजा स्तवन करि भगवानका उपदेशके अर्थि समवसरण अनेक रत्नमय रचें हैं तिस समवसरण की विभूतिका वर्णन कौनकर सकै? पृथ्वीतें पांच हजार धनुष ऊंचाईके बीस हजार पैंडी ताऊपरि इन्द्र नीलमणिमय गोल भूमि बारह योजन प्रमाण तिसऊपरि अप्रमाणमहिमासहित समवसरण रचता है जब समवसरण रचना होय है अर भगवानका विहार होय है तहां आधेनिकू दीखनेलगै जाय बहरे श्रवण

करने लगि जाय लूले चालने लगि जाय है गू गे बोलने लगि जाय है वीतरागकी अद्भूत महिमा है जाके धूलिशालादिक रत्नमय कोट मानस्तंभ अर जलकी खातिका अर पुष्पवाडी फिर रत्नमय कोट दरवाजे नाट्यशाला उपवन वेदी भूमि फिर कोट फिर कल्पवृक्षनिका वन रत्नमयस्तूप फिर महलनिकी भूमि फिर स्फटिकका कोटमैं देवच्छद नाम एक योजनका मण्डप सब तरफ द्वादश सभा तिनकरि सेवित रत्नमय तीन कटनी गंधकुटीमैं सिंहासन ऊपरि च्यारि अंगुल अन्तरीक्ष विराजमान भगवान अरहन्त हैं जिनकी अनन्तज्ञान अनन्तदर्शन अनन्तवीर्य अनंत सुखमयी अन्तरङ्ग विभूतिकी महिमा कहनेकू च्यारिज्ञानके धारक गणधर समर्थ नाहीं अन्य कौन कहि सके अर समवसरण की विभूतिही वचनके अगोचर है अर गंधकुटी तीसरा कटणी ऊपरि है तहां चउसठि चमर बत्तीस युगलदेवनिके मुकुट कुण्डल हार कडा भुजबंधादिक समस्त आभरण पहिरे ढालि रहे है तीन छत्र अद्भुत कांतिके धारक जिनकी कांतितैं सूर्य चन्द्रमा मन्द ज्योतिमार्में है अर जिनकी देहका प्रभामण्डलको चक्रबन्ध रह्या जाकरि समवसरणमैं रात्रिदिनको भेद नाहीं रहै सदा दिवस ही प्रवर्त्त है अर महासुगंध त्रैलोक्यमैं ऐसा सुगंध और नाहीं ऐसी गंधकुटि के ऊपरि देवनिकरि रच्या अशोकवृक्षकू देखतेही समस्त लोकनिका शोकनष्ट होय जाय है अर कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी वर्षा आकाशतैं होय है अर आकाशमैं साढाबार कोटि जातिके वादित्रनिकी ऐसी मधुर ध्वनि होय है जिनके श्रवणमात्रतैं क्षुधा

होते लोकांतिकदेव आय वन्दना स्तवनरूप संबोधनादिक करै हैं अर जिनेन्द्रका विराग भाग होतेही चारिनिकायका इन्द्रादिकनके असने आसन कम्पायमान होनेतैं जिनेन्द्रके तपका अवसर अवधिज्ञानतैं जानि बडे उत्सवतैं जाय अभिषेककरि देवनकरिके वस्त्राभरणते भक्तितैं भूषितकरि रत्नमयी पालकी रचि जिनेन्द्रकूं चढाय अप्रमाण उत्सव अर जय जयकार शब्दसहित तपके योग्य वनमें जाय उतार तहां वस्त्र आभरण समस्त त्यागि देय अथर झेलि मस्तक चढाय अर पचमुष्टी लोच सिद्धनिकूं नमस्कारकरिकर तदि केशनिकूं महा उत्तम जानि इन्द्र रत्ननिके पात्रमें धारणकरि क्षीरसमुद्रमें बडी भक्तितैं क्षेपै हैं जिनेन्द्र केतेक कालमें तपके प्रभावतैं शुक्लध्यानके प्रभावतैं क्षपक श्रेणीमें घातिया कर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानको उत्पन्नकरै हैं तदि अरहन्त नाम प्रगट होय है तदि केवलज्ञानरूप नेत्र करि भूत भविष्यत वर्तमान त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्यनिकी अनन्तानन्त परणतिसहित अनुक्रमतैं एक समयमें युगपत समस्तकूं जानैं हैं देखै हैं। तदि च्यारिनिकायके देव ज्ञानकल्याणकी पूजा स्तवन करि भगवानका उपदेशके अर्थि समवसरण अनेक रत्नमय रचै हैं तिस समवसरण की विभूतिका वर्णन कौनकर सकै? पृथ्वीतें पांच हजार धनुष ऊंचाईके बीस हजार पैडी ताऊपरि इन्द्र नीलमणिमय गोल भूमि बारह योजन प्रमाण तिसऊपरि अप्रमाणमहिमासहित समवसरण रचता है जहां समवसरण रचना होय हैं अर भगवानका विहार होय है तहां आंधेनिकूं दीखनेलगी जाय बहरे श्रवण

होय है। आर्द्धमागधी भाषा समस्त जनसमूहमें मैत्रीभाव, समस्त ऋतुके फूल फल पत्रादिक सहित वृक्ष होय है पृथ्वी दर्पन समान रत्नमयी तृण कंटक रज रहित होय है, शीतल मन्द सुगन्ध पवन चलै है, समस्त जनाकै आनन्द प्रगट होय है, अनुकूल पवन सुगन्ध जलकी वृष्टिकरि भूमि रज रहित होय है चरण धरें तहा सात अगै सात पाछै एक बीच ऐसे पन्द्राकरि दोयमें पचीस कमल देव रचे हैं, आकाश निर्मल-दिशा निर्मलि च्यारनिकायके देवनिकरि जयजय शब्द एक हजार आराकरिसहित किरणनिका धारक अपना उद्योकरि सूर्यमंडलकू तिरस्कार करता धर्मचक्र आगै चालै अष्ट मङ्गलद्रव्य ये चौदह देवकृत अतिशय प्रगट होय हैं। क्षुधा तृषा जन्म जरा मरण रोग शोक भय विस्मय राग द्वेष मोह अरति चिन्ता स्वेद खेद मद निद्रा इन अष्टादशदोषनिकरि रहित अरहंत तिनकी वंदना स्तवन ध्यान करो। या अर्हंतभक्ति संसार समुद्रका तारनेवाली निरंतर चिन्तवन करो। सुखका करनेवाला अर्हंत ताका स्तवन करो याका गुणनिके आश्रय तो अनंत नाम है। अर भक्तिका भर्या इन्द्र भगवानका एक हजार आठ नाम-करि स्तवन किया है अर जे अल्पसामर्थ्यके धारक हैं ते हू अपनी शक्तिप्रमाण पूजन स्तवन नमस्कार ध्यान करो अरहंत-भक्ति संसार समुद्रका तारनेवाली है सम्यग्दर्शनमें अरहंतभक्ति मैं नामभेद है अर अर्थभेद नाहीं है। अरहंतभक्ति नरकादिग-तिकू हरनेवाली है या भक्तिका पूजन स्तवनकरि अर्घ उतार

तप्पादिक समस्त रोग वेदना नष्ट होय जाय हैं अर रत्नजडित सिंहासन सूर्यको कांतिकूं जितै है। बहुरि जिनेन्द्रकी दिव्य ध्वनिकी अद्भुत महिमा त्रैलोक्यवर्ती जीवनिकै परम उपकार करनेवाली मोह अन्धकारका नाश करै है अर समस्तजीव अपनी अपनी भाषामें शब्द अर्थ ग्रहण करै हैं और समस्त जीवनिकै संशय नाहीं रहै है स्वर्ग मोक्षका मार्गकूं प्रगट करै है दिव्यध्वनि महिमा वचनद्वारा गणधर इंद्रादिक कहनेकूं समर्थ नाहीं है जिनके समवसरणमें जातिविरोधी जीवनकै वैर विरोध नाहीं रहै है समवसरणमें सिंह अर गज, व्याघ्र अर गौ मार्जारी अर हंस इत्यादिक जातिविरोधी जीव वैरबुद्धि छांडि परस्पर मित्रताकूं प्राप्त होय हैं। वीतरागताकी अद्भुत महिमा है जिनके असंख्यात देव जय जयकार शब्द करै हैं जिनके भक्तिकूं पाय करिके देवनिकरि रचे कलश झारी, दर्पण धरना, ठौंणा छत्र, चमर, वीजना ये अचेतन द्रव्य हू लोकमें मंगलताकूं प्राप्त होय हैं। अर केवल ज्ञान उत्पन्न भये पाछै दश अतिशय प्रगट होय हैं चारों तरफ सौ सौ योजन सुभिक्षता अर, आकाश गमन भूमिका स्पर्श नाहीं करै, अर काऊ प्राणीका वध नाहीं होय और भोजनका अभाव अर उपसर्गका अभाव, चतुर्मुख दीखै, अर समस्त विद्याका ईश्वरपना, छाया रहितपना अर नेत्र टिमकारै नाहीं, अर केश नख बधै नाहीं ये दश अतिशय घातिया कर्मका नाशतैं स्वय प्रगट होय हैं। और तीर्थंकर प्रकृतिका प्रभावतैं चौदह अतिशय देवनिकरि किये

होय हैं। आर्द्धमागेधी भाषा समस्त जनसमूहमैं मैत्रीभाव, समस्त ऋतुके फूल फल पत्रादिक सहित वृक्ष होय हैं पृथ्वी दर्पन समान रत्नमयी तृण कंटक रज रहित होय हैं, शीतल मन्द सुगन्ध पवन चलै हैं, समस्त जनाके आनन्द प्रगट होय हैं, अनुकूल पवन सुगन्ध जलकी वृष्टिकरि भूमि रज रहित होय है चरण धरें तहां सात अगें सात पाछे एक बीच ऐसे पन्द्रहकरि दोयमैं पचीस कमल देव रचे है, आकाश निर्मल-दिशा निर्मलि च्यारनिकायके देवनिकरि जयजय शब्द एक हजार आराकरिसहित किरणनिका धारक अपना उद्योकरि सूर्यमंडलकू तिरस्कार करता धर्मचक्र आगे चालै अष्ट मङ्गलद्रव्य ये चौदह देवकृत अतिशय प्रगट होय हैं। क्षुधा तृषा जन्म जरा मरण रोग शोक भय विस्मय राग द्वेष मोह अरति चिन्ता स्वेद खेद मद निद्रा इन अष्टादशदोषनिकरि रहित अरहंत तिनको वदना स्तवन ध्यान करो। या अर्हंतभक्ति संसार समुद्रका तारनेवाली निरतर चिन्तवन करो। सुखका करनेवाला अर्हंत ताका स्तवन करो याका गुणनिके आश्रय तो अनंत नाम हैं। अर भक्तिका भऱ्या इन्द्र भगवानका एक हजार आठ नाम-करि स्तवन किया है अर जे अल्पसामर्थ्यके धारक हैं ते हू अपनी शक्तिप्रमाण पूजन स्तवन नमस्कार ध्यान करो अरहंत-भक्ति संसार समुद्रका तारनेवाली है सम्यग्दर्शनमैं अरहंतभक्ति मैं नामभेद है अर अर्थभेद नाहीं है। अरहंतभक्ति नरकादिग-तिकू हरनेवाली है या भक्तिको पूजन स्तवनकरि अर्घ उतार

क॰ है सो देवोंका सुख फिर मनुष्यका सुख भोगि अविनाशी सुखका धारक अक्षय अविनाशी सुखकू प्राप्त होय है, एम अर्हंतभक्ति नाम दशमो भावना वर्णन करी ॥ १० ॥ अब आचार्य भक्ति नाम ग्यारमा भावना वर्णन करै हैं। सो हा गुरु भक्ति है धन्यभाग जिनका होय तिनके वीतराग गुरुनिके गुणनिमे अनुराग होय है धन्य पुरुषनिके मस्तक ऊपरि गुरुनिकी आज्ञा प्रवर्ते है आचार्य हैं सो अनेक गुणनिकी खानि हैं श्रेष्ठताका धारक हैं यातै इनका गुण मनविषै धारणकरि पूजिए अर्घ उतारण करिये पुष्पांजलि अग्रभागमैं क्षेपिये जो मेर ऐसे गुरुनिका चरणनिका शरण ही होहू कैसेक हैं आचार्य जिनके अनशनादिक बारह प्रकारका उज्ज्वल तपनिमैं निरंतर उद्यमहै अर छह आवश्यकक्रियामे सावधान है अर पंचाचारके धारक है अर दशलक्षणधर्मरूप है परणित जिनकी और मनवचनकायका गुप्तकरि सहित हैं ऐसे छत्तीसगुणनिकरि युक्त आचार्य होय हैं अर सम्यग्दर्शनाचारक निर्दोष धारै हैं और सम्यग्ज्ञानकी शुद्धता करि युक्त है अर त्रयोदशप्रकार चारित्रकी शुद्धताके धारक अर तपश्चरणमे उत्साहयुक्ति अर अपने वीर्यकू नाही छिपावतै बाईस-परिषहनिके जीतनेमे समर्थ ऐसे निरंतर पंच आचारके धारक हैं अन्तरंग बहिरङ्ग ग्रन्थकरि रहित निग्रंथ मार्गके गमन करनेमें तत्पर हैं अर उपवास वेला तेला पंचोपवास पक्षोपवास मासोपवास करनेमे तपिर हैं अर निर्जनवनमे अर पर्वतनिके दराडे अर ''फानिके स्थानम निश्चल शुभध्यानम निरन्तर मनकू धारे हैं

अर शिष्यनिकी योग्यताकूं आछो रीतिसूं जानि दीक्षा देनेमें अर शीक्षा करनेमें निपुण हैं अर युक्तितैं नाना प्रकार नयके जाननेवाले हैं अर अपने कायसूं ममत्व छाडि रात्रिदिन तिष्ठै हैं संसारकूपमें पतन हो जानेकैं भयवान हैं मनवचनकायको शुद्धतायुक्त नासिकाके अग्रमैं स्थापित करिये है नेत्रयुगल जिन्हूंने ऐसे आचार्यनिकूं समस्त जगनिकूं नमाय पृथ्वीमैं मस्तकधरि वन्दना करिये है तिन आचार्यनिका चरणनिकरि स्पर्शन भई पवित्ररजकूं अष्टद्रव्यनिकरि पूजिये सो संसार परिभ्रमणका क्लेश पीडाकूं नष्ट करनेवाली आचार्य भक्ति है अर यहां ऐसा विशेष जानना जो आचार्य हैं सो समस्त धर्मके नायक हैं आचार्यनिके आधार समस्त धर्मके नायक हैं आचार्यनिके आधार समस्त धर्म हैं यातैं एते गुणनिके धारक ही आचार्य होय बडा राजानिका वा राजाके मन्त्रीनिका वा महानश्रेष्ठीनिका कुलमें उपज्या होय अर जाके स्वरूपकूं देखते ही शांतपरिणाम हो जाय ऐसा मनोहररूपका धारक होय जिनका उच्चआचार जगतमें प्रसिद्ध होय पूर्वं गृहचारामें भी कदे हीणआचार निन्द्यव्यवहार नाही किया होय अर वर्तमान भोगसम्पदा छाडि विरक्तताकूं प्राप्त भया होय अर लौकिक व्यवहार अर परमार्थके ज्ञाता होय अर बुद्धिको प्रबलता अर तपको प्रबलताका धारक होय अर संघके अन्य मुनीश्वरनितैं ऐसा तप नाहीं बनि सकै तैसा तपका धारक होय बहुत कालका दीक्षित होय बहुत काल गुरुनिका चरण सेवन किया होय वचनका अतिशयसहित होय जिनका

वचन श्रवण करतेँ ही धर्ममें दृढता अर भयका अभाव अर समस्त देहभोगनितैं विरागता जाकै निश्चल होय सिद्धान्तसूत्रके अर्थका पारगामी इन्द्रियनिका दमनकरि इसलोक परलोकसम्बन्धी अभिलाषरहित देहादिकमें निर्ममत्व होय महावीर होय उपसर्गपरीषहनिकरि कदाचित् जाका चित्त चलायमान नहीं होय जो आचार्य ही चलि जाय तो सकलसंघ भ्रष्ट होय जाय धर्मका लोप हो जाय स्वमत परमतका ज्ञाता होय अनेकशास्त्रविद्यामें क्रीडा करनेवाला होय अन्यके प्रश्नादिकतैं कायरतारहित तत्काल उत्तर देनेवाला होय एकांतपक्षका खण्डनकरि सत्यार्थधर्मका स्थापन करनेका जाका सामर्थ्य होय धर्मकी प्रभावना करनेमें उद्यमी होय गुरुनिके निकट प्रायश्चित्तादिकसूत्र पढि छत्तीस गुणनिका धारक होय है सो समस्त संघकी साक्षितैं गुरुनिकरि दिया आचार्यपद प्राप्त होय ऐसे गुणनिका धारक होय तिसहीकै आचार्यपना होय है ऐसे गुणनि विना आचार्य होय तो धर्मतीर्थका लोप हो जाय उन्मार्गकी प्रवृत्ति हो जाय समस्तसंघ स्वच्छन्दाचारी हो जाय सूत्रकी परिपाटी अर आचारकी परिपाटी नष्ट हो जाय। बहुरि आचार्यपनाके अन्य अष्ट गुण हैं तिनका धारक होय। आचारवान, आधारवान व्यवहारवान, प्रकर्ता अपायापायविदर्शी, अवपीडक, अपरस्रावी, निर्यापक ए आठ गुण हैं। तिनमें पंच प्रकारका आचार धारण करै ताकूं आचारवान कहिये है जीवादिकतत्त्व भगवान सर्वज्ञ वीतराग दिव्य निरावरणज्ञानकरि प्रत्यक्ष देखि कह्या तिनमें श्रद्धानरूप परणति

सो दर्शनाचार है स्वपरतत्त्वनिकूं निर्बाध आगम अर आत्मानुभव करि जाननारूप प्रवृत्ति सो ज्ञानाचार है हिंसादिक पंच पापनिका अभावरूप प्रवृत्ति सो चारित्रचार है अन्तरंग तपमें प्रवृत्ति सो तपाचार है परीषहादिक आए अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय धीरतारूप प्रवृत्ति सो वीर्याचार है यथा औरहू दश प्रकार स्थित-कल्पादिक आचारमें तथा समितिगुप्त्यादिकनिका कथन करिये तो बहुत कथन बधि जाय। पंचप्रकार आचार आप निर्दोष आचरै अर अन्य शिष्यादिकनिकूं आचरण करावनेमें उद्यमी होय सो आचार्य है आप हीणाचारी होय सो शिष्यनिकूं शुद्धआचरण नाहीं कराय सकै हीणाचारी होय सो आहार विहार उपकरण वस्तिका अशुद्ध ग्रहण कराय दे अर आपन आचारहीण होय सो शुभ उपदेश नाहीं करि सकै तातैं आचार्य आचारवान ही होय ॥ १ ॥ बहुरि जाके जिनेन्द्रका प्ररूप्याच्यार अनुयोगका आधार होय स्याद्वादविद्याका पारगामी होय शब्दविद्या न्याय-विद्या सिद्धांतविद्याका पारगामी होय प्रमाणनय निक्षेपनिकरि स्वानुभव करि भले प्रकार तत्त्वनिका निर्णय किया होय सो आधारवान है जाके श्रुतका आधार नाहीं सो अन्य शिष्यनिका संशय तथा एकांतरूप हठ तथा मिथ्याचरणकूं निराकरण नाहीं करि सकै। बहुरि अनन्तानन्तकालमें परिभ्रमण करता जे याके अतिदुर्लभ मनुष्यजन्मकूं पावना तामें हू उत्तमदेश जाति कुल इन्द्रियपूर्णता दीर्घायु सत्संगति श्रद्धान ज्ञान आचरण ए उत्तरो-त्तर दुर्लभ संयोग पाय तो अल्पज्ञानी गुरुके निकट वसनेवाला

शिष्य सो सत्यार्थ उपदेश नाहो पावनेतैं यथार्थ आपका स्वरूप नाही पाय मक्षयरूप हो जाय तथा मोक्षमार्गकू अतिदूर अति कठिन जानि रत्नत्रयमार्गतैं चलि जाय तथा सत्यार्थ उपदेश विना विषयकषायनिमैं उरझा मनकू निकासनेमैं समर्थ नाही होय तथा रोगकृत वेदनाम तथा घोर उपसर्गपरीषहनितैं चलय हुवा परिणामकू श्रुतका अतिशयरूप उपदेशविना थामनेकू समर्थ नाही हाय है। बहुरि मरण आजाय तदि सन्यासका अवसरमैं आहारपानका त्यागको यथा अवसर देशकाल सहाय सामर्थ्यका क्रमकू ममझे विना शिष्यका परिणाम चलि जाय वा आर्त्तध्यान हो जाय तो सुगति बिगाडि जाय धर्मका अपवाद हो जाय अन्य मुनि धर्ममें शिथिल हो जाय तो बडा अनर्थ है तथा जो मनुष्य आहारमय है आहारत जोवै है आहारहीका निरन्तर वाछा करै है अर जब रोगके वशतैं तथा त्याग करनेतैं आहार छूटि जाय तदि दुःखकरि ज्ञानचरित्रमें शिथिल होय धर्मध्यान रहित हो जाय तो बहुश्रुत गुरु ऐसा उपदेश करै जाकरि क्षुधातृषाकी वेदनारहित होय उपदेशरूप तमृतकरि सींचा हुआ समस्त क्लेश रहित भया धर्मध्यानमैं लीन हो जाय है क्षुधातृषारोगादिककी वेदना सहित शिष्यकू धर्मका उपदशरूप अमृतका पान अर शिक्षारूप भोजनकरि ज्ञानसहित गुरुही वेदनारहित करै बहुश्रुति का आधारविना धर्म रहै नाही तातैं आधारवान आचार्य होय ताहीका शरण ग्रहण करना योग्य है बहुरि जो शिष्य वेदनाकरि दुःखित होय ताके हस्त पाद मस्तकको दाबना स्पर्शनादि करना

मिष्टवचन कहना इत्यादिककरि दु.ख दूर करै तथा पूर्वै जे अनेक साधु घोरपरीषह सहकरि आत्मकल्याण किया तिनकी कथाके कहनेकरि तथा देहतै भिन्न आत्माका अनुभव करावनेकरि वेदना रहित करै तथा भो मुने ! अब दु.खमें धैर्य धारण करो ससार में कौन कौन दु ख नाही भोगे अर वीतरागताका शरण ग्रहण करोगे तो दु खनिका नाशकरि कल्याणकू प्राप्त होवोगे इत्यादिक बहुत प्रकार कहि मार्गस्ं नाही चलने देवै तातैं आधारवान गुरु-निहीका शरण योग्य है ॥ २ ॥ बहुरि जो व्यवहार प्रायश्चित्त-सूत्रनिका ज्ञाता होय जातै प्रायश्चित्तसूत्र आचार्य होने योग्य होय तिसहीकू पढावै है औरनिके पढने योग्य नाही जो जिन-आगमका ज्ञाता अर महावीर्यवान प्रबलबुद्धिका धारक होय सो प्रायश्चित देवै अर द्रव्य क्षेत्र काल भाव क्रिया भाव परिणाम उत्साह सहनन पर्याय जो दीक्षाका काल अर शास्त्रज्ञान पुरुषा-र्थादिक आछी रीति जाणि रागद्वेष रहित होय प्रायश्चित देवै है।

भावार्थ—जामैं ऐसी प्रवीणता होय जो याकू ऐसा प्राय-श्चित दिये याका परिणाम उज्वल होगया अर दोषका अभाव हायगा व्रतनिमें दृढता होयगी ऐसा ज्ञाता होय जाके आहारकी योग्यताका ज्ञानहोय तथा यता क्षेत्रमैं एसा प्रायश्चितका निर्वाह होयगा वा या क्षेत्रमे निर्वाह नाही होयगा तथा इस क्षेत्रमैं वात पित्त, कफ शीत उष्णताकी अधिकता है कि हीनता है कि सम-

कर्त्तृत्वगुण मुख्य है समस्त संघका वैयावृत्य करनेका जाका सामर्थ होय है कोउ हीणाचारी ताकू शुद्ध आचरण ग्रहण करावै काऊ सन्दज्ञानी होय तिनकू समझाय चारित्रमें लगावै कईनिकूं प्रायश्चित दय शुद्ध करै काऊकू धर्मोपदेश दय दृढ़ता करै। धन्य है आचार्य जिनके शरणा प्राप्त होय गया तिनकूं मोक्ष मार्गमें लगाया उद्धार करै है यातें आचार्यका प्रकुर्वा नामा गुण प्रधान है ॥४॥ बहुरि अपायोपायविदर्शी नामा पांचमा गुण है कोऊ साधु क्षुधा तृषा रोग वेदनाकरि पीड़ित हुआ क्लेशित परिणामरूप हो जाय तथा तीव्र रागद्वेषरूप हो जाय तथा लज्जाकरि भयकरि यथावत आलोचना नाहीं करै तथा रत्नत्रयमें उत्साह रहित हो जाय धर्मतें शिथिल हो जाय तातें अपाय मानि रत्नत्रयका नाश अर उपाय रत्नत्रयकी रक्षाजिनका प्रगट गुण दोष ऐसा दिखावै जो रत्नत्रयका नाश होतैं पल्यायमान हो जाय अर रत्नत्रयका नाशतें अपना नाश अर नरकादि कुगतिमें पतन साक्षात दिखावै अर रत्नत्रयकी रक्षातें संसारतें उद्धार मोक्ष अनंत सुखकी प्राप्ति उपदेशकरि साक्षात दिखाय देय ऐसा उपदेशकरि साक्षात दिखाय दय ऐसा उपदेशका सामर्थ जामें होय सो अपायोपायविदर्शी नाम गुणका धारक आचार्य होय है इहां उपदेश दिखाय कथन बहुत हो जाय जातें नाहीं लिख्या ॥५॥ अब अवपीडक नाम छठा गुण कहिये है काऊ मुनि रत्नत्रय धारण करके हू लज्जाकरि भयकरि अभिमान गौरवादिकरि अपना आलोचना यथावत शुद्ध नाहीं करै तो

आचार्य ताकू स्नेहकी भरी कर्णनिकू मिष्ट अर हृदयमे प्रवेश करै ऐसी शिक्षा करे जो हे मुने ! बहुत दुर्लभ रत्नत्रयका लाभ ताकू मायाचार करि नष्ट मति करो माता पिता समान गुरुनिके निकट अपने दोष प्रगट करनेमे कहा लज्जा है अर वात्सल्यके धारक गुरु हू अपने शिष्यके दोष प्रगट करि शिष्यका अर धर्मका अपवाद नाहीं करावै हैं ताते शल्य दूरिकरि आलोचना करो जैसैं रत्नत्रयकी शुद्धता अर तपश्चरणका निर्वाह होयगा तैसे द्रव्य क्षेत्र काल भावके अनुसार प्रायश्चित्त तुमकू दिया जायगा तातैं भय त्यागि आलोचना निर्दोष करहु ऐसे स्नेहरूप वचन करिकेहू जो माया शल्य नाहीं त्यागै तो तेजका धारक आचार्य शिष्यकी शल्यकू जबरीतै निकासै जिमकाल आचार्य शिष्यकू देखते ही स्याल खाया हुआ मासहू तत्काल उगलै है तथा जैसै महा प्रचण्डतेजस्वी राजा अपराधकू पूछै तदि तत्काल सत्य कहताही बणै तैसे शिष्यहू माया शल्यकू निकासै हैं अर मायाचार नाहीं छाडै तो गुरु तिरस्कारके वचनहू कहै है हे मुने ! हमारे सघतैं निकसजाहु हमकरि तुम्हारे कहा प्रयोजन है जो अपना शरीरादिकका मैल धोया चाहेगा सो निर्मल जलके भरे सरोवरकू प्राप्त होयगा जो अपना महान् रोगकू दूरि किया चाहैगा सो प्रवीण वैद्यकू प्राप्त होयगा तैसे जो रत्नत्रयरूप परमधर्मका अतिचार दूरिकरि उज्वलता किया चाहैगा सो गुरुणिका आश्रय करेगा तुम्हारे रत्नत्रयकी शुद्धिता करनेमे आदर नाहो तातैं ये मुनिपणा व्रत धारण भग्न होय क्षुधादि परीषह सहनेको मिटवनाकरि कहा

सहज है मगर निर्जरा तो कषायनिके जीतनेतें हैं माया कषाय कूं नहीं त्याग नाहीं किया तदि व्रत संयम मौन धारण वृथा है नम्रता अर परिग्रहरहितता मायाचारीका वृथा है तिगाच दू परिग्रह हित जय रहै हो है यातें तुम दुरभव्य हो हमारे वन्दने योग्य नाहीं हो अर तुम्हारे परिणाम ऐसे हैं जो हमारा दोष प्रगट होय तो हम निन्द्य होय जांय हमारा उच्चपणा प्रतिष्ठा में मानना वक्रताका कारण है ऐसा तो स्तुति निंदामें समानपरिणामी होय हैं ऐसे गुरु कठोर वचन कहि करके हू मायाचारादिका अभाव करावै कैसा होय अवपीडक आचार्य जो बलवान होय उपसर्ग परिषह आये कायर नाहीं होय प्रतापवान होय जाका वचन कोऊ उल्लंघन करने समर्थ नाहीं होय अर प्रभावना होय जाकूं देखतप्रमाण दोषका धारक साधु कांपने लगि जाय जाकूं बडे बडे ऋद्धिके धारक नम्रीभूत होय वन्दना करें जाकी उज्ज्वलकीर्ति विख्यात होय जाकी कीर्ति सुनताही जाके गुणनिमें दृढ श्रद्धा हो जाय जाका वचन जगतमें दरया विनाही दूरदेशनिमें प्रमाण करै सिंहका ज्यों निर्भय होय ऐसो अवपीडक गुणका धारक गुरु होय सो जैसें शिष्यका हित होय तैसें उपकार करै है जैसें बालकका हितकूं चिन्तवन करती माता रुदन करताहू बालककूं दावकरि मुख फाडि जबरीतें घृत दुग्धादि पान करावै है। ऐसे शिष्यका हितकूं चिन्तवन करता आचार्य हू माया-शल्यसहित क्षपकका बलात्कारकरि दोष दूरि करै है अथवा कटुक औषधि ज्यों पश्चात् हित करै है जो जिह्वाकरिके मिष्ट बोले अर

शिष्यकूं दोषतैं ही छुडावै सो गुरु भला नाहीं अर जो आचरण करि ताडनाहूकरि दोषनितैं भिन्न करे है सो गुरु पूजने योग्य है तातैं अवपीडकगुणका धारक हो आचार्य होय है ॥ ६ ॥ अब अपरश्रावीगुणकूं कहै हैं जो शिष्य गुरुनिकूं दोष आलोचना करै सो दोष अन्यकूं गुरु प्रकाश नाहीं करै जैसे तप्तायमान लोहकरि पीया जल सो बाह्य प्रगट नाहीं होय तैसें शिष्यकरि अवश्य किया दोष आचार्य हू किसीकूं नाहीं जणावै है सो ही अपरश्रावी नाम गुण है शिष्य तो गुरुका विश्वासकरकें रह अर गुरु जो शिष्यका दोष प्रगट करै अन्यकूं जनावै तो सो गुरु नाहीं अधर्म है विश्वासघाती है कोउ शिष्य अपना दोषकी प्रगटता जानि दुःखित होय आत्मघात करै है वा क्रोधी होय रत्नत्रयका त्याग करै है तथा गुरुकी दुष्टता जानि अन्यसंघमै जाय तथा जब हमारा अवज्ञा करी तब तुमारी हू अवज्ञा करैगा ऐसे समस्त संघमें दोषपणा प्रगट होय समस्तसंघ आचार्यनिका प्रतीतिरहित हो जाय आचार्य संघकै त्याज्य हो जाय इत्यादिक बहुत कष्ट कथनी बधि जाय तातैं अपरश्रावी गुणका धारक ही आचार्य योग्य है ॥ ७ ॥ अब आचार्य निर्यापक होय जैसें नावकू खेवटिया समस्त उपद्रवनिकूं टालि नावकूं पार उतारि ले जाय तैसे आचार्य हू शिष्यकूं अनेक विघ्न बचाय संसार समुद्रके पार करै सो निर्यापक है ॥ ८ ॥ ऐसे आचारवान ॥ १ ॥ आधारवान ॥ २ ॥ व्यवहारवान ॥ ३ ॥ प्रकर्ता ॥ ४ ॥ अपायोपायविदर्शी ॥ ५ ॥ अवपीडक ॥ ६ ॥ अपरश्रावी ॥ ७ ॥

विनयपिक ॥ ८ ॥ यह आचार्यनिके अष्टगुणकू धारक करतेनिके गुणनिमें अनुरागसे आचार्य भक्ति है ऐसे आचार्यनिके गुणनिकू स्मरण करके आचार्यनिका स्तवन वन्दना करता जो पुरुष अर्घ उतारण करै है सो पापरूप ममारका परिपाटीकू नष्टकरि अक्षय सुखकू प्राप्त होय है ऐसे वीतराग गुरु कहै है। ऐसे आचार्य भक्ति वर्णन करा ॥ ११ ॥ अब बहुश्रुतभक्ति नाम बारमी भावनाकू कहै हैं। जो अगपूर्वादिकका ज्ञाता तथा च्यार अनुयोगनिका पारगामी जो निरन्तर आप परमागमकू पढ अन्य शिष्यनिकू पढावै बहुश्रुती है तथा जिनके श्रुतज्ञान ही दिव्य-नेत्र है अर अपना अर परका हित करनेमें प्रवर्तै ते और अपने जिनसिद्धान्त अर अन्य एकान्तीनिके सिद्धान्तनिका विस्तारते जाननेवाले स्याद्वादरूप परमविद्याके धारक तिनकी जो भक्ति सो बहुश्रुतीकी महिमा कौन कहनेकू समर्थ है जे निरन्तर श्रुतज्ञान का दान करै हैं ऐसे उपाध्याय तिनकी भक्ति विनयकरि सहित करै है ते चारित्ररूप समुद्रका पारगामी होय हैं जे अङ्गपूर्वक प्रकीर्णक जिनेन्द्र वर्णन किये तिन समस्त जिनागमकू निरन्तर पढै पढावै ते बहुतश्रुती हैं इहां प्रथम आचाराग तामें अठारह हजार पदनिमें मुनिधर्मका वर्णन है ॥ १ ॥ सूत्रकृतागका छत्तीस हजार पद हैं जिनमे जिनेन्द्रके श्रुतके आधारत करनेके विनय क्रियाका वर्णन है ॥ २ ॥ स्थानांगका ब्यालिस हजार पद तिनमें षट्द्रव्यनिका एकादि अनेक स्थानका वर्णन है ॥ ३ ॥ समवा-याग एक लाख चौसठि हजार पदनिमें है तिनमें जीवादिक

पदार्थनिका द्रव्यक्षेत्र काल भावनिकै आश्रित समानता वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्ति अङ्गके दोयलक्ष अट्ठाईस हजार पदनिमैं जीवका अस्तिनास्ति इत्यादिक गणधरनिकरि कीये साठि हजार पदनिका वर्णन है ॥ ५ ॥ ज्ञातृधर्मकथांगके पांचलक्ष छप्पन हजार पदनिमें गणधरनि करि कीये प्रश्ननिके अनुसार जीवादिकनिका स्वभावका वर्णन है ॥ ६ ॥ उपासकाध्ययन नाम अङ्गके ग्यारहलक्ष सत्तर हजार पदनिमे श्रावकके व्रत शील आचार क्रियाका तथा याका मन्त्रनिका उपदेशका वर्णन है ॥ ७ ॥ अन्तकृतदशांगके तेईसलक्ष अट्ठाईस हजार पदनिमे एक एक तीर्थंकरके तीर्थमे दश दश मुनीश्वर उपसर्ग सहित निर्वाण प्राप्त भये तिनका कथन है ॥ ८ ॥ अनुत्तरोपपादकदशांगके बाणवै लक्ष चौवालीस हजार पदनिमें एक एक तीर्थंकरके तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर महाभयकर घोर उपसर्ग सहित देवनितैं पूजापाय विजयादिक अनुत्तरविमानमें उपजे तिनका वर्णन है ॥ ९ ॥ प्रश्नव्याकरण नाम अंगके बानवैलक्ष सोडस सहस्र पदनिमें नष्ट मुष्टि लाभ अलाभ सुख दु ख जीवित मरणादिकके प्रश्नका वर्णन है ॥ १० ॥ विपाकसूत्रांगके एककोटि चौरासीलक्ष पदनिमे कर्मनिका उदय उदीर्णा सत्ताका वर्णन है ॥ ११ ॥ अर दृष्टिवाद नाम बारमअंगका पाच भेद है परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्व, चूलिका तिनमैं परिकर्मकाहू पाच भेद है तिनमे चन्द्रप्रज्ञप्तिके छत्तीस लक्ष पाँच हजार पदनिमे चन्द्रमाका आयु गति अर कलाकी हानिवृद्धि अर ग्रहनिमित्त परिवारादिकका वर्णन है ॥ १ ॥ अर

सूर्यप्रज्ञप्तिके पाचलक्ष तीन हजार पदनिमे सूर्यका आयु गति विभवादिकका वर्णन है ॥ २ ॥ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिके तीन लक्ष पचीस हजार पदनिमें जम्बूद्वीप सम्बन्धी क्षेत्र कुलाचल द्रह नदी इत्यादिकनिका निरूपण है ॥ ३ ॥ द्वीपसागरप्रज्ञप्तिके बावन लक्ष छत्तीस हजार पदनिमें असख्यातद्वीप समुद्रनिका और मध्य-लोकके जिनभवनुनिका अर भवनवासी व्यन्तर ज्योतिष्क देवनि के निवासनिका वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्तिके चौरासी लक्ष छप्पन हजार पदनिमें जीव पुद्गलादि द्रव्यका निरूपण है ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार परिकर्म कह्या अब दृष्टिवादका दूजा भेद सूत्रके अठासीलक्ष पदनिमें जीव अस्तिरूप ही है नास्तिरूप ही है कर्त्ता ही है भोक्ता ही है इत्यादिक एकान्तवादिकरि कल्पित जीवका स्वरूपका वर्णन है ॥ २ ॥ बहुरि प्रथमानुयोग के पाच हजार पदनिमें त्रेसठि महापुरुषनिके चरित्रका वर्णन है ॥ ३ ॥ अब दृष्टिवादका चतुर्थभेदमे चौदहपूर्व है तिनमें उत्पादपूर्वके एक कोटि पदनिमें जीवादिक द्रव्यनिका उत्पादादि स्वामावका निरूपण है ॥ १ ॥ अग्रायणीपूर्वके छिनवैकोटि पदनिमें द्वादशागका सारभूत सप्ततत्व नवपदार्थ षट्द्रव्य सातमें सुनय दुर्नयादिकका स्वरूपका वर्णन है ॥ २ ॥ वीर्यानुवादके सप्तलक्ष पदनिमें आत्मवीर्य परवीर्य कालवीर्य कालवीर्य भाववीर्य तपोवीर्यादि समस्त द्रव्यगुण पर्यायनिका वीर्यका निरूपण है ॥ ३ ॥ अस्तिनास्तिप्रवाद नाम पूर्वके साठिलक्ष पदनिमें जीवादिद्रव्यनिका स्वद्रव्यादिचतुष्टयकी अपेक्षा अस्ति और परद्रव्यादि

चतुष्टयकी अपेक्षा नास्ति इत्यादिक सप्तभगादिक तथा नित्य-अनित्य एक अनेकादिकनिका विरोधरहित वर्णन है ॥ ४ ॥ ज्ञानप्रवाद पूर्वके एक घाटि कोटि पदनिमें मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवल ये पाच ज्ञान अर कुमति कुश्रुति विभग ये तीन अज्ञान इनका स्वरूप सख्या विषयफलनिके आश्रय प्रमाणपना अप्रमाणपनाका वर्णन है ॥ ५ ॥ सत्यप्रवादपूर्वके छह अधिक एककोटि पदनिमें वचनगुप्ति अर वचन स सस्कारका कारण जर द्वादश भाषा अर वक्तानिके भेद अर बहुत अर प्रकार असत्य अर दशप्रकारके सत्यका वर्णन है ॥ ६ ॥ आत्मप्रवादपूर्वके छब्बीस कोटि पदनिमें आत्मा जीव है कर्ता है भोक्ता है प्राणी है पद्गल है वेद है विष्णु है स्वयम्भू है शरीरी मान वक्ता शक्त जतु मानी मायी नियोगी अमकुट क्षेत्रज्ञ इत्यादिक स्वरूपका वर्णन है ॥ ७ ॥ कर्मप्रवादपूर्वके एक कोटि अस्सी लाख पदनिमें कर्मनिका बधउदय उदीर्ण सत्त्व उत्कर्षण उपशमन सक्रमणविधि निकाचितादि अवस्था अर ईर्यापथ तपस्या अधः-कर्मादिकनिका वर्णन है ॥ ८ ॥ प्रत्याख्यानपूर्वके चौरासीलक्ष नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्रकाल भावनिकू आश्रय करि पुरुषनिका सहनन अर बलादिकनिके अनुसार प्रमाणीक काल वा अप्रमाणीक काल लिये त्याग अर पापसहित वस्तुते निराला होना अर उप-वासकी विधि अर उपवासकी भावना अर पचसमिति अर तीन गुप्तिका वर्णन है ॥ ९ ॥ विद्यानुवादके एक कोटि दशलक्ष पद-निमें अगुष्टप्रसेनादिक सातसै अल्पविद्या अर रोहिणी आदि पाँच

स महाविद्यानिका स्वरूप सामर्थ्य अर इनका साधन मन्त्र तन्त्र पूजा विधानका अर सिद्ध भई तिनका फलका अर अन्तरिक्ष भौम अंग स्वर स्वप्न लक्षण व्यंजन छिन्न ये अष्टप्रकार निमित्तज्ञानका वर्णन है ॥ १० ॥ कल्याणानुवादपूर्वके छब्बीसकोटि पदनिमें तीर्थंकर चक्रधर बलदेव प्रतिवासुदेवादिकनिका गर्भकल्याणादि महाउत्सवनिका अर इन पदनिका कारण षोडश भावना वा तपविशेष आचरणादिकका अर चन्द्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्रनिका गमन तथा ग्रहण शकुनादिकके फलका वर्णन है ॥ ११ ॥ प्राणप्रवाद पूर्वके तेरहकोटि पदनिमें कायका चिकित्साका अष्टांग आयुर्वेद जो वैद्यविद्या ताका भूतकर्मका अर जांगलिका अर इला पिंगलादिक स्वासोच्छ्वासका अर गतिके अनुसार दशप्राणनिके उपकारक अनुपकारक द्रव्यनिका वर्णन है ॥ १२ ॥ क्रियाविशालके नवकोटि पदनिमें संगीत शास्त्र छन्द अलंकार बहत्तरि कला अर स्त्रीके चौसठिगुण अर शिल्पादिज्ञान अर चौरासी गर्भाधानादि क्रिया अर एकसौआठ सम्यग्दर्शनादि क्रिया अर पच्चीस देववंदनादिक नित्यनैमित्तिक क्रिया वर्णन है ॥ १३ ॥ त्रिलोकबिंदुसारपूर्वके साढ़ाबाराकोटि पदनिमें त्रैलोक्यका स्वरूप छत्तीस परिकर्म अष्ट व्यवहार च्यारि बीज मोक्षका स्वरूप मोक्षगमनका कारण क्रिया अर मोक्षसुखका वर्णन है ॥ १४ ॥ ऐसे पिच्याणवै कोडि पचास लाख पांच पदनिमें चौदह पूर्व वर्णन किया। अब दृष्टिवादांगको पांचमा भेद चूलिका पांच प्रकार है एक एक चूलिकाके दोय कोटि नवलक्ष

निन्यानी हजार दोय मैं पद हैं तिनमें जलगताचूलिकामें जलका स्तंभन जलमें गमन अग्निका स्तंभन भक्षण अग्निऊपरि आसन अग्निमें प्रवेशनादिकका कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चरणका वर्णन है ॥ १ ॥ अर स्थलताचूलिकामें मेरु कुलाचलादिकनिमें भूमिमें प्रवेश करनेकू अर शीघ्रगमनके कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चरणका वर्णन है ॥ २ ॥ अर मायागताचूलिकामें मायारूप इन्द्रजालादि विक्रियाका मन्त्र तन्त्र तपश्चरणादिकका वर्णन है ॥ ३ ॥ आकाशगताचूलिकामें आकाशगमनका कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चरणादिका वर्णन है ॥ ४ ॥ रूपगताचूलिकामें सिंह, हस्ती, तुरग, मनुष्य, वृक्ष, हरिण, शशा, बलधि, व्याघ्रादिकके रूप पलटनेके कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चरणका वर्णन है तथा चित्राम माटी पाषाण काष्ठादिक इनकासोदना तथा धातुवाद, रसवाद, खान्यवादादिकका रचनाके अर्थ है ॥ ५ ॥ पचचूलिकाके दशकोटि गुणचासलाख छयालीस हजार पद हैं इहां ऐसा जानना समस्त द्वादशांगके एक घाटि एकट्ठी प्रमाण अक्षर हैं। १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ एते अनुपमरुक्त अक्षर हैं एक वार आगा अक्षर दूसरा नाहीं आर इनमें मठि मयोगा ताईं अक्षर है अर आगममें कथा ऐसा मध्यपदका प्रमाण सोलासै चौतीस कोडि तीयासीलक्ष सात हजार आठसै अठासी १६३४८३०७८८८ अपुनरुक्त अक्षर हैं इन अक्षरनिका प्रमाणका भाग दीए एकसौ बाराकोटि तीयासीलक्ष अठावन हजार पांचपदे आए तिनमें समस्त द्वादशांग है और अवशेष अक्षर आठकोटि एक लक्ष

आठ हजार एकसौपचेतरिआक रहे ८०१०८१७५ इनिअक्षरनिका एक पद होय नाहीं तातें इनकूं अगबाह्य कहा नित अक्षरनिका सामायिकादि चौदह प्रकीर्णक हैं सामायिक नाम प्रकीर्णकमें मिथ्यात्व कषायादिकका वन्धका अभावरूप नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्रकाल भावके भेदतें छह भेदरूप सामायिकका वर्णन है ॥ १॥ बहुरि चौतीस अतिशय अष्टप्रातिहार्य परमौदारिक दिव्य देह समवशरण सभा धर्मोपदेशादिक तीर्थंकरनिका महात्म्यका प्रकाशरूप स्तवन नाम प्रकीर्णक है ॥ २ ॥ एक तीर्थंकरके आलम्बन रूप चैत्यालय प्रतिमाका स्तवनरूप प्रकीर्णक है ॥३॥ बहुरि पूर्वकृत प्रमादजनित दोषका निराकरणके अर्थि दैवसिक रात्रिक चतुर्मासिक, सांवत्सरिक, ऐर्यापथिक, उत्तमार्थ ऐसे सप्त प्रकार प्रतिक्रमका जामैं वर्णन ऐसा प्रतिक्रमण नाम प्रकीर्णक है ॥ ४ ॥ बहुरि सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित्र तप उपचार स्वरूप पंचप्रकार विनयका वर्णनरूप विनय नाम प्रकीर्णक है ॥ ५ ॥ बहुरि वन्दनानिकी बन्दनाके अर्थि तीन प्रदक्षिणा च्यु शिरोनति तीन शुद्धता द्वादश आवर्त इत्यादिक नित्यनैमित्तिकक्रियाका जामैं वर्णन ऐसा कृतकर्म प्रकीर्णक है ॥ ६ ॥ बहुरि जामें साधुका आचारके गोचर आहारकी शुद्धताका वर्णनरूप दश वैकालिका प्रकीर्णक है ॥७॥ बहुरि च्यारप्रकार उपसर्ग तथा बाईसपरीषहनिके सहनेके विधान अर इनके फलका वर्णनरूप उत्तराध्ययन प्रकीर्णक है ॥ ८ ॥ बहुरि साधके योग्य आचरणका विधान अयोग्य सेवनका प्रायश्चित्तका वर्णनरूप व्यवहार नाम प्रकीर्णक

है ॥ ९ ॥ बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावके आश्रय साधक ये योग्य हैं ये अयोग्य हैं ऐसा विभागका वर्णनरूप कल्पाकल्प नाम प्रकीर्णक है ॥ १० ॥ बहुरि उत्कृष्ट संहननादिसंयुक्त द्रव्य क्षेत्रकाल भावके प्रभावतें उत्कृष्टचर्याकरि वर्तते ऐसे जिनकल्पी साधुनिके योग्य त्रिकालयोगादि आचरणका अर स्थविर कल्पनिका दीक्षा शिक्षा गण पोषण आत्मसंस्कार सल्लेखना अर उत्कृष्टस्थानगत उत्कृष्ट आराधनाका वर्णनरूप महाकल्प नाम प्रकीर्णक है ॥ ११ ॥ जामें भवन व्यन्तर ज्योतिष्क तथा कल्पवासीनिके विमाननिमें उपजनेका कारण दान पूजा तपश्चरण अकामनिर्जरा सम्यक्त्व संयमादिकका विधान तिनके उपजानेका स्थान वैभवका वर्णरूप पुंडरीक नाम प्रकीर्णक है ॥ १२ ॥ बहुरि महर्द्धिक देवनिमें इन्द्र प्रतीन्द्रादिकनिमें उपजनेका कारण तपोविशेषादिक आचरणका कहनेवाला महापुंडरीक प्रकीर्णक है ॥ १३ ॥ जामें प्रमादसूं उपज्या दोषनिका स्वागतरूप निषिद्धका प्रकीर्णक है ॥ १४ ॥ जैसे द्वादशांगरूप सूत्रका ज्ञान है सो तपका प्रभावतें उपजे है सो आप पढे हैं अन्यको शिक्षा बुद्धिप्रमाण शिष्यनिकूं पढावै है तिन बहुश्रुतनिका भक्ति है सोहू बहुश्रुतभक्ति है जो गुणनिमें अनुराग करना ताकूं भक्ति कहिये है जो शास्त्रनिमें अनुरागकरि पढै तथा शास्त्रके अर्थकूं अन्यकूं कहै जो धनकूं लगाय शास्त्र निका लिखावै तथा अपने हस्तकरि शास्त्र लिखै तथा हीन अधि कअक्षरकूं मात्राकूं शोधन करै तथा पढनेवालेनिकूं शास्त्र लिखाय देवै तथा व्याख्या करै पढावने प्रचारने वालेनिकी

आचार्यनिकी स्थिरताकरि शास्त्रनिके ज्ञानाभ्यासकी प्रवर्तन करना, स्वाध्याय करनेके अर्थि निराकुल स्थान देवै सो ज्ञानावरण कर्मका नाश करनेवाली बहुश्रुतभक्ति है। बहुरि बहुमूल्य वस्त्रनिमैं पूठा लगाय पट्टमय डोरि करि शास्त्रनिकूं बांधै जो श्रवण पठन करनेवालेनिका मनकूं रञ्जायमान करै सो समस्त बहुश्रुतिभक्ति है। बहुरि सुवर्ण करि मनोहर घड भये अर पंचप्रकार रत्ननिकरि जटित मकडा पुष्पनिकरि शास्त्रकी सारभूत पूजा करै सो श्रुतिभक्ति संशयादिक रहित सम्यग्ज्ञान उपजाय अनुक्रमतैं केवलज्ञान उपजावै है जो पुरुष अपने मनकूं इन्द्रियनिके विषयनितैं रोकि अर वारम्वार श्रुतदेवताका गुण स्मरण करके भलीविधीकरि बनाया पवित्र धर्म श्रुतदेवताका उतारे है सो समस्त श्रुतका पारगामी होय केवलज्ञान उपजाय निर्वाणकूं प्राप्त होय है ऐसे बहुश्रुतिभक्ति नाम बारमी भावना वर्णन करी सो निरन्तर भावो ॥ ४२ ॥ अर प्रवचनभक्ति नाम तेरमी भावनाकू वर्णन करै हैं। प्रवचन नाम जिनेन्द्र सर्वज्ञ वीतरागकरि प्ररूपण किया आगमका है। जिसमें षट्द्रव्यनिका पंचास्तिकायका सप्ततत्त्वनिका नवपदार्थनिका वर्णन है अर कर्मनिकी प्रकृतीनिका नाश करनेका वर्णन सो आगम है जाका प्रदेश बहुत होय ताकी अस्तिकाय संज्ञा है। अर गुणपर्यायनिकूं निरन्तर प्राप्त होय तातैं द्रव्यसंज्ञा है वस्तुपनाकरि निश्चय करिये तातैं पदार्थ संज्ञा है स्वभावरूपपनातैं तत्त्वसंज्ञा है सो इनकी विशेष कथनी आगे प्रकरण पाय कहसी। जैसे अन्धकारसंयुक्त महलमें दीपक हस्तमें

लेकरि समस्तपदार्थ देखिये है तैसें त्रैलोक्यरूप मन्दिरमें प्रवचन-रूप दीपकरि सूक्ष्म स्थूल मूर्तीक अमूर्तीक पदार्थ देखिये है। प्रवचनरूप ही नेत्रनिकरि मुनीश्वर चेतनादि गुणनिके धारक समस्तद्रव्यनिका अवलोकन करै जिनेन्द्रके परमागमकू योग्यकाल में बहुत विनयपूर्वक पढिये सो प्रवचनभक्ति है कैसाकू है प्रवचनजामें षट्द्रव्य सप्ततत्व नवपदार्थनिका भेद समस्तगुणपर्यायनिका वर्णनहै जामें भूतकाल अनन्त भया और भविष्यत अनन्त होयगा अर वर्तमान तिनका स्वरूप वर्ण है। जामें अधोलोककी सप्तपृथ्वीअर नारकीनिका वसनेका उत्पत्ति होनेका स्थाननिकू अर आयु काय वेदना इत्यादिक समस्तका अर भवनवासी देवनिका सातकरोड बहत्तरलाख भवनिका अर तिनका आयु काय विभव विक्रिया भोगादिकनिका अधोलोकमें वर्णन किया है। जामें मध्यलोक सम्बन्धी असंख्यात दीप समुद्रनिका अर तिनमें मेरु कुलाचल नदी द्रहादिकनिका अर कर्म भूमिके विदेहादिक क्षेत्रनिका अर भोग-भूमिका अर छिनवै अन्तर्दीप सम्बन्धी मनुष्यनिका अर कर्म भूमिके भोगभूमिके मनुष्यनिका कर्तव्यका और आयु काय सुख दुःखादिकनिका अर तिर्यचनिका व्यन्तरनिके निवास विभव परि-वार आयु काय सामर्थ्य विक्रियाका वर्णन है। तथा मध्यलोक में ज्योतिष्कदेव है तिनके विमान विभव परिवार आयु कायादिक का तथा सूर्य चन्द्रमा ग्रह नक्षत्रनिका चारक्षेत्रगत संयोगादिकका वर्णन है।

बहुरि ऊर्ध्वलोकके त्रेसठपटलनिका स्वर्गके अहमिन्द्रकेपटल

निका इन्द्रादिक देवनिका विभव परिवार आयु,काय,शक्ति गति सुखादिकका वर्णन है। ऐसे सर्वज्ञकरि प्रत्यक्ष देखा त्रिलोकवर्ती समस्त द्रव्यनिके उत्पाद व्यय ध्रौव्यपना समस्त प्रवचनमैं वर्णन आगममैं है बहुरि कर्मनिकी प्रकृतिनिका बन्ध होनेका उदयका सत्ताका संक्रमण दिकनिका समस्त वर्णन आगमनमैं है। बहुरि संसारते उद्धार करनेवाला रत्नत्रयका स्वरूप,प्राप्त होनेका उपाय परमागममें बहुरि गृहस्थपणामें श्रावक धर्मका जघन्य मध्यम उत्कृष्ट चर्चाकारा तथा श्रावकनिके व्रत संयमादिक व्यवहार परमार्थरूप प्रवृत्तिका वर्णन प्रवचननैं ही जानिये है बहुरि गृहका त्यागी मुनीनिके महाव्रतादि अट्ठाईस मूलगुण और चौरासीलाख उत्तरगुण अर स्वाध्याय ध्यान आहार विहार-सामायिकादि चा चारित्र चर्याका धर्मध्यान शुक्लध्यानादिका सल्लेखना मरणका समस्तचर्याका वर्णन प्रवचनमें है। बहुरि चौदह गुणस्थानिका स्वरूप तथा चौदह जीवसमासनिका अर चौदह मार्गणानिका वर्णन प्रवचनतैं जानिये है तथा जीवनिके एक सौ साडानिन्याणवे लक्ष कुलकोड अर चौरासी लाख जातिका योनिस्थान प्रवचनहीतैं जानिये है तथा च्यार अनुयोग च्यार शिक्षाव्रत तीनगुणव्रत आगमतैही जानिये है। तथा च्यार गतिनिका भेद अर सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रका स्वरूप भगवानका प्ररूप्या आगम हित जानिये है। बहुरि द्वादश भावना अर द्वादश तप अर द्वादश अङ्ग अर चौदह प्रकीर्णकनिका स्वरूप प्रवचनहीतैं जानिये है। बहुरि उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालकी

कथिणी अर यामैं छह-छह भेदरूप कालमैं पदार्थकी परिणतिका भेदनिका स्वरूप आगमतैं जानिये है। बहुरि कुलकर तीर्थंकर चक्रधर बलदेव वासुदेव प्रतिवासुदेव इत्यादिकनिकी उत्पत्ति प्रवृत्ति धर्म तीर्थका प्रवर्तन चक्रीका साम्राज्य, वसुदेवादिकनिके विभव, परिवार ऐश्वर्यादिक आगमहीतैं जानिये हैं। बहुरि जीवादिक द्रव्यनका प्रभाव आगमहीतैं जानियेहै तातैं आगमकूं भक्तिपूर्वक सेवनविना मनुष्यजन्ममैं हू पशू समान है, भगवान सर्वज्ञ वीतराग समस्त लोक अलोककूं अनन्तानन्त भूत, भविष्यत वर्तमान कालवर्ती पर्यायनिकरि संयुक्त एक समयमैं युगपत् क्रम रहित हस्तकी रेखावत् प्रत्यक्ष जान्या देख्या ताकरि प्ररूपण किया स्वरूपकूं सप्तऋद्धि च्यार ज्ञानधारी गणधरदेव द्वादशांगरूप रचना प्रगट करी इहां ऐसा विशेष जानना जो देवाधिदेव परम पूज्य धर्मतीर्थके प्रवर्तन करनेवाले अनन्तज्ञान अनन्तदर्शन अनन्त वीर्य अनन्तसुखरूप अनन्तलक्ष्मी अर समवसरणादि बहिरङ्गलक्ष्मीकरि मंडित अर इन्द्रादिक असंख्यात देवनिके समूहकरि वन्दनीक चौंतीस अतिशय अष्टप्रातिहार्यादि अनुपम ऋद्धिकरि सहित अर क्षुधा तृषादि अष्टादश दोषरहित समस्त जीवनिका परमोपकारक अर लोक अलोकके अनन्तगुण पर्यायनिका क्रमरहित युगपत ज्ञानका धारक अर अनन्तशक्तिका धारक संसारमैं डूबते प्राणीकूं हस्तावलम्बन देनेवाला समस्त जीवनिका दयालु परमात्मा परमेश्वर परमब्रह्म परमेष्ठी स्वयम् शिव अजर अमर अरहन्तादि नामकरि विख्यात अशरण प्राणीनिकूं परमशरण

अनन्तकौ परमौदारिक देहमैं तिष्ठता गणधरादिक मुनीश्वरनिकरि वन्दनीक हैं चरण जिनका अर कंठ तालुवा ओष्ठ जिह्वादिकका चलनहलनरहित इच्छाबिना अनेक प्राणीनिका पुण्यके प्रभावतैं उपज्या अर आर्य अनार्य समस्त देशके प्राणीनिका ग्रहणमें आवता समस्त पापका घातक दिव्यध्वनिकरि भव्य जीवनिका मोह अंधकारकूं नष्ट करता चमरनिकरि वीज्यमान छत्रत्रयादि प्रातिहार्यके धारक रत्नमय सिंहासन अर च्यार अंगुल अंतरीक्ष विराजमान भगवान सकलपूज्य परमभट्टारक श्रीवर्द्धमानदेवाधिदेव मोक्षमार्गका प्रकाशनके अर्थि समस्तपदार्थनिका स्वरूप सातिशय दिव्यध्वनिकरि प्रगट किया तिस अवसरमें निकटवर्ती निर्ग्रन्थ ऋषिश्वरनिकरि वंदनीक महाऋषि समृद्धि च्यारिग्यानके धारक श्रीगौतमनाम गणधरदेव स्पष्टबुद्धि आदिक ऋद्धिके प्रभावतें भगवान भाषित अर्थका नाहीं विस्मरण होता भगवानभाषित अर्थकूं धारणकरि द्वादशांगकी रचना रची। जब चतुर्थकालका तीनवर्ष साढे आठ महीना बाकी रह्या तदि श्रीवर्द्धमानस्वामी निर्वाण गये पीछै गौतम स्वामी, सुधर्माचार्य, जम्बूस्वामी ए तीन केवली बासठवर्ष पर्यन्त केवल ज्ञानकरि समस्त प्ररूपणा करी। पाछै केवलज्ञानका अभाव भया ता पाछैं अनुक्रमकरि विष्णु, नंदिमित्र, अपराजित, गोवर्धन, भद्रबाहु ये पांच मुनि द्वादशांगके धारक श्रुतकेवली भए तिनका एक सौ वर्षका अवसर क्रमतैं भया तिनके अवसरमें भगवान केवलीतुल्य पदार्थनिका ग्यान अर प्ररूपणा रही। बहुरि विशाख

स्वाचार्य, प्रोष्ठिलाचार्य, क्षत्रिय, जयसेन, नागसेन, सिद्धार्थ, धृतिषेण, विजय बुद्धिमान गंगदेव, धर्मसेन ये दश पूर्वके धारक एकादश परम निर्ग्रंथ मुनीश्वर अनुक्रमतैं एक सौ तियासी वर्षमें भये तेहू यथावत प्ररूपणा करी बहुरि नक्षत्र, जयपाल, पाडुनाम, ध्रुवसेन, कंसाचार्य ये पांच महामुनी एकादशांग विद्याका पारगामी अनुक्रमतैं दोय सौ बीस वर्षमें भये तेहू यथावत प्ररूपणा करी। बहुरि सुभद्र, यशोभद्र, भद्रबाहु, महायश, लोहाचार्य ये पंच महामुनि एक प्रथम अंगका पारगामी एकसौ अठारा वर्षमैं अनुक्रमतैं भये। ऐसैं भगवान वीरजिनेन्द्रकू निर्वाण गये पाछैं छह सौ तिरासी वर्ष पर्यंत अंगका ज्ञान रह्या पाछैं ऐसैं कालके निमित्ततैं बुद्धिवीर्यादिककी मन्दता होते श्री कुन्दकुन्दादि अनुक्रम मुनि निर्ग्रंथ वीतरागी अंगके वस्तुनिका ज्ञानी होते भये तथा उमास्वामी भये ऐसे पापतैं भयभीत ज्ञानविज्ञानसम्पन्न परमसंजमगुणमण्डित गुरुनिकी परिपाटीतैं श्रुतका अव्युच्छिन्न अर्थके धारक वीतरागीनिका परम्परा चली आई जिनमें श्रीकुन्दकुन्दस्वामी समयसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, अष्टपाहुडकू आदि लेय अनेक ग्रन्थ रचते अबार प्रत्यक्ष बाचने पढनेमें आवै हैं। इन ग्रन्थनिका जो विनयपूर्वक आराधन सो प्रवचन भक्ति है। बहुरि दशअध्यायरूप तत्त्वार्थसूत्र श्रीउमास्वामी रच्या तिसकी तत्त्वार्थसिद्धि नाम टीका पूज्यपादस्वामी रची है। अर तत्त्वार्थसूत्र ऊपरि हो राजवार्तिक सोलह हजार श्लोकनिमैं श्रीअकलंकदेव रच्या अर श्लोकवार्तिक चोस

किया है सो परमदेवता है जो माता, पिता, ध्यानाभ्यास, करावें हैं ते कोट्या धन दिया। जे सम्यग्ज्ञानके दाता गुरु हैं, तिनका उपकार समान मात्र त्रैलोक्यमें कोऊ उपकारक नाहीं अर ज्ञानके देनेवाला गुरुका उपकारकूं लोपै है तिस समान कृतघ्नी नाहीं पापी नाहीं। ध्यानका अभ्यास बिना व्यवहार परमार्थ दोउनिमें मूढ है यातैं प्रवचन भक्ति ही परमकल्याण हैं। प्रवचनका सेवन बिना मनुष्य पशु समान है। या प्रवचन भक्ति हजारां दोषनिका नाश करनेवाली है याको भक्तिपूर्वक अर्ध उतारण करो याही तें सम्यग्दर्शनकी उज्ज्वलता होय है। ऐसे प्रवचन भक्ति नामा तेरवी भावना वर्णन करी ॥ १३ ॥

अब आवश्यकापरिहाणि नाम चौदमी भावना वर्णन करें हैं। अवश्य करनेयोग्य होय ताकूं आवश्यक कहिये है। आवश्यकनिकी जो हानि नाहीं करनेका चिन्तवन सो आवश्यकापरिहाणीनाम भावना है। अथवा इन्द्रियनिके वश नाहीं सो अवश्य कहिये अवश्य जे मुनि तिनकी जो क्रिया सो आवश्यक है। आवश्यककी हानि नाहीं करना सो आवश्यकापरिहाणि कहिये ते आवश्यक छह प्रकार हैं। सामायिक स्तवन, वन्दना, प्रतिक्रमण स्वाध्याय, कायोत्सर्ग ये छह आवश्यक हैं सो कहिये हैं। जे देह तैं भिन्न ध्यानमयही जाके देह ऐसा परमात्मस्वरूप, कर्मरहित चैतन्यमात्र शुद्धजीवकूं एकाग्रकार ध्यावता मुनि है सो सर्वोत्कृष्ट निर्वाणकूं प्राप्त होय है अर जो विकल्परहित शुद्धआत्माके गुणनिमें आपका मन नाहीं तिष्ठै तो तपस्वीमुनि षट् आवश्यक



दिया है या परमदेवता है जो माता, पिता ध्यानाभ्यास कराने हैं, ते कोट्या धन दियो। जे सम्यग्ज्ञानके दाता गुरु हैं तिनका उपकार समान मान त्रैलोक्यमें कोऊ उपकारक नाहीं, अर ज्ञानके देनेवाला गुरुका उपकारक लोप है तिस समान कृतघ्नी नाहीं पापो नाहीं। ध्यानका अभ्यास विना व्यवहार परमार्थ दोऊनिमें मूढ है यातैं प्रवचन भक्ति ही परमकल्याण है। प्रवचनका सेवन विना मनुष्य पशु समान है। या प्रवचन भक्ति हजारां दोषनिका नाश करनेवाली है याका भक्तिपूर्वक अर्घ उतारण करो याही तै सम्यग्दर्शनकी उज्ज्वलता होय है। ऐसे प्रवचन-भक्ति नामा तेरवी भावना वर्णन करी ॥ १३ ॥

अब आवश्यकापरिहाणि नाम चौदमी भावना वर्णन करैं हैं। अवश्य करनेयोग्य होय ताकू आवश्यक कहिये है। आवश्यकनिकी जो हानि नाहीं करनेका चिन्तवन सो आवश्यका परिहाणिनाम भावना है। अथवा इन्द्रियनिके वश नाही सो अवश्य कहिये अवश्य जे मुनि तिनको जो क्रिया सो आवश्यक है। आवश्यककी हानि नाही करना सो आवश्यकापरिहाणि कहिये ते आवश्यक छह प्रकार हैं। सामायिक स्तवन, वन्दना, प्रतिक्रमण स्वाध्याय, कायोत्सर्ग ये छह आवश्यक हैं सो कहिये हैं। जे देह तैं भिन्न ध्यानमयी जाके देह ऐसा परमात्मस्वरूप, कर्मरहित चैतन्यमात्र शुद्धजीवकू एकाग्रकार ध्यावता मुनि है सो सर्वोत्कृष्ट निर्वाणकू प्राप्त होय है अर जो विकल्परहित शुद्धआत्माके गुणनिमें आपका मन नाहीं तिष्ठै तो तपस्वीमुनि षट् आवश्यक



तिति
हा श जोपरम
जा धर्मताकरि
दया हा तात आप वृषभ हा अर जगतके सकल प्राणीनिम गुण

क्रिया हैं तिनकी पुष्ट करो अङ्गीकार करो अर आपते अशुभकर्म के आस्रवकूं निराकरण करो टालो प्रथम तो सुन्दर असुन्दर वस्तुमें तथा शुभ अशुभ कर्मके उदयमें रागद्वेष मति करो तथा आहार वस्तिकादिकनिका लाभमें वा अलाभमें समभाव करो जातें स्तुतिमें, निन्दामें, आदरमें, अनादरमें, पाषाणमें, रत्नमें, जीवनमें मरणमें, वैरीमें, मित्रमें, सुखमें, दुःखमें, स्मशानमें, रागद्वेष रहित परिणाम होना सो समभाव है। जातें साम्यभावके धारक हैं ते बाह्य पुद्गलनिकूं अचेतन अर आपतें भिन्न अर अपने आत्मस्वभावमें हानि वृद्धिके अकर्त्ता जानि रागद्वेष छाडै है अर आपकूं शुद्ध ज्ञाताद्रष्टारूप अनुभव करता रागद्वेषादिविकार रहित तिष्ठै है ताके साम्यभाव होय है सोही सामायिक है बहुरि भगवान जिनेन्द्रका अनेक नामनिकरि स्तवन करना सो स्तवन नाम आवश्यक है जो कर्मरूप वैरीकूं आप जीते तातें जिन हो अर अपने स्वरूपमें आपकरि तिष्ठो हो तातें स्वयंभु हो अर केवलज्ञान रूप नेत्रकरि त्रिकालवर्ती पदार्थनिकूं जानो हो तातें त्रिलोचन हो अर आप मोहरूप अन्धासुरकूं मारथा तातें अन्धकान्तक हो आप घातियाकर्म रूप अधवैरीनिका नाश करके ही अदित ने ईश्वर पना पाया तातें अर्धनारीश्वर हो आप शिवपद जो निर्वाणपद तामें बसे तातें आप शिव हो पापरूप वैरीका सहार करो हो तातें आप हर हो लोकमें सुखका कर्ता तातें आप शंकर हो शं जो परम आनन्दरूप सुख तामें उपजे तातें संभव हो वृष जो धर्मताकरि दिपो हो ...म हो अर जगतके सकल प्राणीनिमें

वैद्या है सो परमदेवता है जो माता, पिता, ध्यानाभ्यास करावैं हैं ते कोड्यां धन दिया। जे सम्यग्ज्ञानके दाता गुरु हैं तिनका

[illegible]

क्रिया हैं तिनको पुष्ट करो अङ्गीकार करो अर जानते अशुभकर्म के आस्रवकू निराकरण करो टालो प्रथम तो सुन्दर असुन्दर वस्तुमें तथा शुभ अशुभ कर्मके उदयमें रागद्वेष मति करो तथा आहार वस्तिकादिकनिका लाभमें वा अलाभमें समभाव करोजात स्तुतिमें, निन्दामें, आदरमें, अनादरमें, पाषाणमें, रत्नमें, जीवनमें मरणमें, वैरीमें, मित्रमें, सुखमें, दुःखमें, स्मशानमें, रागद्वेष रहित परिणाम होना सो समभाव है। जातें साम्यभावके धारक हैं ते बाह्य पुद्गलनिकू अचेतन अर आपतें भिन्न अर अपने आत्मस्वभावमें हानि वृद्धिके अकर्त्ता जानि रागद्वेष छांडे हैं अर आपकू शुद्ध ज्ञाताद्रष्टारूप अनुभव करता रागद्वेषादिविकार रहित तिष्ठै है ताके साम्यभाव होय है सोही सामायिक है बहुरि भगवान जिनेन्द्रका अनेक नामनिकरि स्तवन करना सो स्तवन नाम आवश्यक है जो कर्मरूप वैरीकू आप जीते तातें जिन हो अर अपने स्वरूपमें आपकरि तिष्ठो हो तातें स्वयम्भु हो अर केवलज्ञान रूप नेत्रकरि त्रिकालवर्ती पदार्थनिकू जानो हो तातें त्रिलोचनहो अर आप मोहरूप अन्धासुरकू मार्‍या तातें अन्धकान्तक हो आप घातियाकर्म रूप अर्द्धवैरीनिका नाश करके ही अद्वितीय ईश्वरपना पाया तातें अर्धनारीश्वर हो आप शिवपद जो निर्वाणपद तामें बसे तातें आप शिव हो पापरूप वैरीका संहार करो हो तातें आप हर हो लोकमें सुखका कर्ता तातें आप शंकर हो शं जो परम आनन्दरूप सुख तामें उपजे तातें सभव हो वृष जो धर्म ताकरि दिपो हो तातें आप वृषभ हो अर जगतके सकल प्राणीनिमें गुण

निश्चरि बडे तातें जगज्येष्ठ हो क जो सुखताकरि समस्त जीवन की पालना करो तातें आप कृपाली हो केवल ज्ञानकरि समस्त लोक अलोकर्मे व्याप्त हो रहे तातें आप विष्णु हो अर जन्मजरा मरणरूप त्रिपुरकू मास्या तातें आप त्रिपुरातक हो ऐसैं एकहजार आठ नामकरि आपका स्तवन इन्द्र किया है। अर गुणनिकी अपेक्षा आपका अन्त नाम है। ऐसैं भावनिमैं गुणचिन्तवनकरि जा चौबीस तीर्थंकरनेका स्तवन करै है सा स्तवन नामआवश्यक है ॥ २ ॥ बहुरि चतुर्विंशति तीर्थंकरनैं मे त एकतीर्थंकरनेका वा अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुनमैं त एकएक मुख्य-करि स्तुति करना सो बन्दना आवश्यक है ॥ ३ ॥ बहुरि जो समस्त दिनमें प्रमादके वश होया तथा कषायनिके वश होय वा विपर्यास मे रागद्वेषी होय कोऊ एकेन्द्रियादिक जीवनिका घात किया तथा अनर्थक प्रवर्तन किया वा सदोषभोजन किया वा किसी जीवका प्राणपीडित किया तथा कर्कश कठोर मिथ्या वचन क्या वा किसीकी निन्दा अपवाद किया अपनी प्रशंसा करो वा स्त्री कथा भोजन कथा देश कथा राज्य कथा करी तथा अदत्तधन ग्रहण किया वा परका धनमैं लालसा करी तथा परकी स्त्रीमें राग किया यथा धन परि गृहादिकमें लालसा करा ते समस्त पाप खोटे किये बन्धनके कारण किये, अब ऐसा पापरूप परिणामनिकू भगवान पच परम गुरू हमारी रक्षा करहू अर ऐ परिणाम मिथ्या होहू पचपरमेष्ठी के प्रसादतैं हमारे पापरूप परिणाम मति होहू ऐसे भावनिकी

शुद्धता वास्ते कायोत्सर्गकरि पच नमस्कारके नव जाप्य करै ऐसे समस्त दिनकी प्रवृत्तिकूं सध्याकाल चिन्तवनकरि पापपरिणाम निकूं निन्दना सो दैवसिक प्रतिक्रमण है। अर रात्रि सम्बन्धी पापका दूरि करनेके अर्थ प्रभात प्रतिक्रमण करना सो रात्रिक प्रतिक्रमण है। बहुरि मार्गमे चालनेमे दोष लग्या ताका शुद्धिका जो प्रतिक्रमणसो ऐर्यापथिक प्रतिक्रमण है। एक पक्षके दोष निराकरण करनेके अर्थ पाक्षिक्य प्रतिक्रम है च्यार महीनेके दोष निराकरणके अर्थ प्रतिक्रमण करना चातुर्मासिक प्रतिक्रमण है एक वर्षके दोष निराकरणके अर्थ सावत्सरिक प्रतिक्रमणहै समस्त पर्यायके कालका दोष निराकरणके अर्थ अन्त्य सन्यासमरणकी आदिमें प्रतिक्रमण है सो उत्तमार्थ प्रतिक्रमण है ऐसें सात प्रकार प्रतिक्रमण है तिनमे गृहस्थके सध्या अर प्रभाततो अपना नफा टोटा अवश्य देखना योग्य है। इहा जो सौ पचास रुपयाका व्यवहार करनेवाला हू आथगनै ठिगाई देखै हैतो इस मनुष्य जन्मकी एक एक घडो कोटिधनमे दुर्लभ गया पाछैं नहीं मिलै है याका विचार हू अवश्य करना जो आज मेरे परमेष्ठीका पूजनम स्तवनमें केता काल गया अर स्वाध्यायमें पचपरमगुणके शास्त्र श्रवणमें तत्वार्थकी चरचामें धर्मात्माकी वैयावृत्तिमें केता काल गया अर घरके आरभमें कषायमें तथा विकथा करनेमै निसादमें भोजनादिकर्मे वा अन्य इन्द्रियनिके विषयनिमें प्रमोदमें निद्रामें शरीरके सस्कार में हिंसादिक पच पापनिमें केता काल गया है ऐसा चिन्तवनकरि पापमें

बहुत प्रवृत्ति भई होय तो आपकू विकार देय पाप बन्धके कारणनिकू घटाय धर्म कार्यमें आत्माकू युक्त करना योग्य है पंचकालमें प्रतिक्रमण ही परमागममें धर्म कह्या है। आत्माका हित अहितका विचारमें निरन्तर उद्यमी रहना योग्य है। यो प्रतिक्रमण आत्माकी बडी भावना करनेवाला है अर पूर्वले किये पापकी निर्जरा करै है ॥ ४ । बहुरि आगामी कालमें आपके अशुभके रोकनेके अर्थ पापनिका त्याग करना जो आगे मैं ऐसा पाप कबहू मन वचन कायकरि नाहीं करूंगा सो प्रत्याख्यान नाम आवश्यक सुगतिका कारण है ॥५॥ बहुरि च्यार अंगुलके अन्तराले दोऊ पग बराबरि खडा रहै दोउहस्तनिकू लम्बायमानकरि देहका ममता छाडि नासिकाका अग्रमैं दृष्टि धारि देहतै भिन्न शुद्ध आत्माकी भावना करना सो कायोत्सर्ग है। सो निश्चय पद्मासनतै हू होय अर खडा दहकरि हू होय दोऊनिमैं शुद्धध्यानका अवलम्बनतै सफलहै ।६। ए छह आवश्यक परमधर्मरूप हैं इनकू पूजि पुष्पांजलि क्षेप अर्घ उतारण योग्य है। बहुरि ए छह आवश्यक परमागममें छह छह प्रकार कह्या है। नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि षट प्रकार जानना। शुभ अशुभ नामकू श्रवणकरि राग द्वेष नाहीं करना सो नामसामयिक है। कोऊ स्थापना प्रमाणादिक करि सुन्दर है कोऊ प्रमाणादिक करि हीनाधिक करि सुन्दर है तिनके विषै राग द्वेषका अभाव सो स्थापना सामायिक है। सुवर्ण रूपा रत्न मोती इत्यादिक अर मृत्तिका काष्ठ पाषाण

कण्टक छार भस्म धूल इत्यादिकनिमैं रागद्वेष रहित सम देखना सो द्रव्य सामायिक है। महल उपवनादि रमणीक श्मशानादिक अरमणीक क्षेत्रमैं रागद्वेष छाडना सो क्षेत्र सामयिक है हिम शिशिर वसन्त ग्रीष्म वर्षा शरत ये ऋतु अर रात्रि दिवस अर शुक्लपक्ष कृष्णपक्ष इत्यादिक काल विषैं रागद्वेषको वर्जन सो काल सामयिक है अर समस्त जीवनिवै दु ख मति होहू ऐसा मैत्रीभावकरि अशुभ परिणामनिका अभाव करना सो भाव सामयिक है ऐसे छह प्रकार सामायिक कह्या। अब छह प्रकार स्तवन कहे हैं चतुर्विंशति तीर्थंकरनिका अर्थ सहित एक हजार आठ नामकरि स्तवन करना सो नाम स्तवन है अर कृत्रिम अकृत्रिम अपरिमाण तीर्थंकर अरहन्तनिके प्रतिबिम्बनिका स्तवन सो स्थापना स्तवन है अर समवसरणस्थित काल देह प्रभा प्रातिहार्यादिकनि करिस्तवन सो द्रव्य स्तवन है अर कैलाश सम्मेदाचल ऊर्यन्त (गिरनार) पावापुर चम्पापुरादि निर्वाण क्षेत्रनिका तथा समवसरणमैं धर्मोपदेशक क्षेत्रका स्तवन सो क्षेत्र स्तवन है। अर स्वर्गावतरण जन्म तप ज्ञान निर्वाण कल्याणके कालका स्तवनसो काल स्तवन है अर केवल ज्ञानादिअनन्तचतुष्ट्य भावका स्तवन सो भाव स्तवन है ऐसे छह प्रकार स्तवन कह्या। ए तीर्थंकर वा सिद्ध तथा आचार्य उपाध्याय साधु इनमैं एकका नामका उचारण करना सो नाम वन्दना है। अर अरहत सिद्ध आचार्यादिकनिमै एकका प्रतिबिम्बादिककी वदना सो स्थापन वदना है तिनके शरीरकी वदना है। तिनके शरीरकी वदना सो

द्रव्य वदना है। अरहत सिद्ध आचार्यादिकनि करि व्याप्त जो क्षेत्रताको वदना सो क्षेत्र वदना है। तिन ही पचपरमगुरनिमैं कोऊ एककरि व्याप्त जो काल तासी वदना सो काल वदना है। एक तीर्थंकरका वा सिद्धका वा आचार्यका वा उपाध्यायका वा साधुके आत्मगुणनिकू वदना करना सो भाव वदना है। ऐसैं छह प्रकार वदना कही।

अब छह प्रकार प्रतिक्रमण कहै है। अयोग्य नामके उच्चारणमैं कृतकारित अनुमोदनारूप मनवचन कायतै उपज्या दोषका निराकरणके अर्थि प्रतिक्रमण करना सो नाम प्रतिक्रमण है। कोऊ शुभ अशुभस्थापनाका निमित्ततै मन वचन कायतै उपज्या दोषतै आत्माकू निवृत्त करना सो स्थापना प्रतिक्रमण है। अर द्रव्य जो आहार पुस्तक औषधादिकके निमित्ततै मनवचनकायतै उपज्या दोषका निराकरणके अर्थ द्रव्यप्रतिक्रमण है अर गमनस्थानादिकके निमित्ततैं उपज्या अशुभ परिणाम जनित दोषनिका निराकरणके अर्थ क्षेत्र प्रतिक्रमण है। अर दिवस रात्रि, पक्ष, ऋतु, शीत, उष्ण, वर्षाकाल इनके निमित्ततैं उपज्या अतीचारकी दूर करनेकू प्रतिक्रमण करना सो काल प्रतिक्रमण है। अर राग द्वेषादि भावनितै उपज्या दोषके दूर करनेकू भाव प्रतिक्रमण है। बहुरि अयोग्य पापके कारण जे नाम उच्चारण करनेका त्याग सो नाम प्रत्याख्यान है अर अयोग्य मिथ्यात्वादिक प्रवर्तावनेवाली स्थापना करनेका त्याग सो प्रत्याख्यान है। पापबन्धका कारण सदोषद्रव्य वा तपके निमित्त निर्दोष द्रव्यका हू मनवचन

कार्य करि त्याग सो द्रव्यप्रत्याख्यान है बहुरि असंजमका कारण क्षेत्रका त्याग सो क्षेत्र प्रत्याख्यान है मिथ्यात्व असंजम कषायादिकनिका त्याग सो भाव प्रत्याख्यान है ऐसे छह प्रकार प्रत्याख्यान वर्णन किया। अब छह प्रकार कायोत्सर्गकूं कहै हैं। पापके कारण कठोर कटुक नामादिकतें उपज्या दोषका दूर करने अर्थ कायोत्सर्ग करना सो नाम कायोत्सर्ग है। पापरूप स्थापना का द्वारकरि आया अतीचार दूरकरनेकूं कायोत्सर्ग करना सो स्थापना सो कायोत्सर्ग है। सदोषद्रव्यके सेवनतें तथा सदोषक्षेत्रकालके सेवनतें सयोगत उपज्या दोष दूर करनेकूं कायोत्सर्ग करना सो द्रव्यक्षेत्रकाल कायोत्सर्ग है। मिथ्यात्व असंजमादिक भावनिकरि कीया दोष दूर करनेकूं कायोत्सर्ग करना सो भाव कायोत्सर्ग है। ऐसे छह प्रकार छह आवश्यक वर्णन किये। अब गृहस्थके और हू छह प्रकारके आवश्यक हैं। भगवान जिनेन्द्र नित्य पूजन करना, निर्ग्रन्थगुरुनिका सेवन स्तवन चिन्तवन नित्य करना अर जिनेन्द्रके प्ररूपे आगमका नित्य स्वाध्याय करना इन्द्रियनिकूं विषयनितें रोकना छह काय जीवनकी दया पालना सो संयम है, शक्ति प्रमाण नित्य तप करना, शक्ति प्रमाण नित्य दान देना ये षटप्रकार हू आवश्यक गृहस्थको नित्य नियमतें अङ्गीकार करना योग्य हैं। ऐसे समस्त पापका नाश करनेवाली भावनिकूं उज्वल करनेवाली आवश्यकनिकी हानिका अभावरूप चौदमी भावना वर्णन करी ॥१४॥

अब सन्मार्ग प्रभावना नाम पदमी भावना वर्णन करे हैं। इहां सन्मार्ग जो मोक्षका सत्यार्थ मार्ग ताका प्रभाव प्रगट करना सो मार्ग प्रभावना है। सो सन्मार्ग रत्नत्रय आत्मा स्वभाव है ताकू मिथ्यात्व राग, द्वेष, काम, क्रोध, मान, माया, लोभ, ये विपरीत करि अनादित मलीन विपरीतकरि राख्या है अर परमागमका शरण पाय मोकू मिथ्यात्वादिक दोषनिकू दूरिकरि रत्नत्रय स्वभावकू उज्वलकरना यो मनुष्यजन्म अर इन्द्रियपूर्णता अर ज्ञानशक्ति अर परमागमका शरण अर साधर्मिनिका समागम अर रोगादिकरहितपना अर अतिक्लेश रहित जीविका इत्यादिक पुण्यकूर सामग्री पायकरके हू जो आत्माकू मिथ्यात्वकषाय विषयादिक तें नाहीं छुडायाती अनन्तानन्त दुःखनिका भर्या संसार समुद्र तें मेरा निकसना अनन्तकालहू नाहीं होयगा जो सामग्री अवार मिली है सो अनन्तकालमैंहू दुर्लभ है अर अन्तरंग बहिरंग सकल सामग्री पायकरके हू जो आत्माका प्रभाव नाहीं प्रगट करूंगा तो अचानक काल आय समस्त संयोग नष्ट कर देगा तातें अबमैं रागद्वेष मोह दूरकरि जैसैं मेरा शुद्ध वीतराग स्वरूप अनुभवगोचर होय तैसे ध्यान स्वाध्यायमैं तत्पर होना। बहुरि बाह्य-प्रवृत्तिभी मेरी, उज्वल करि अन्तर्गत धर्मका प्रभाव प्रगट करि मार्ग प्रभावना करना, जाकू देखि अनेक जीवनिके हृदयमैं, धर्मकी महिमा प्रवेश करि जाय। जिनेन्द्रका उत्सव ऐसा करना जाकू देखि हजारा लाखनिका भाव जिनेन्द्रके जन्म कल्याण समय, जैसैं इन्द्रादिक

देव अभिषेक करि अपना जन्म सफल किया तैसे जयजयकारशब्द करि हजारा स्वरका उचारण करि लोक आपकू कृतार्थ मान तन मन प्रफुल्लित हो जाय तैसे अभिषेक करि प्रभावना करना तथा जिनेन्द्रका पाठ भक्ति अर बडी विनय अर निश्चल ध्यान करि गेमे पूजन करै जाकू करते देखते अर शुद्ध भक्तिके पाठ पढते तथा श्रवण करते हर्षके अंकुरे प्रगट होय आनन्द हृदयमे नाही समावतां बाह्य उछलने लगजाय जिनकू देखि मिथ्यादृष्टिकाहू ऐसा परिणाम हो जाय अहो जैनीनिकी भक्ति आश्चर्यरूप है जामे ये निर्दोश उत्तम उज्ज्वल प्रमाणीक सामग्री अर ये उज्वल सुवर्णके रूपाके तथा कासी पीलमय मनोहर पूजन के पात्र अर ये भक्तिके रसकरि भरे अर्थ सहित कर्णनिकू अमृतरूप सीचते शुद्ध अक्षरनिका उच्चारण अर एकाग्ररूप विनय सहित शब्दनि क अनुकूल उज्वल द्रव्यका चढावना अर ये परमशातमुद्रारूप वीतरागके प्रतिबिम्ब प्रतिहार्यनिकरि भूषितका पूजना स्तवन करना नमस्कार करता धन्य पुरुषनिकरि होय है। धन्य इनकी भक्ति धन्य इनका जन्म का धन्य इनका मनवचनकाय अर धन्य इनका धन जो निर्वाछक होय ऐसे सन्मार्गमे लगावे है। ऐसा प्रभाव व्याप्त हो जाय। अर देखनेतें अर श्रवण करनेतें निकट भव्यनिके आनन्दके अश्रुपात झरने लगिजाय। भक्ति ही ससार समुद्रतें डूबतेकू हस्तावलम्बन देनेवाली है हमारे भवभवमें जिनेन्द्रको भक्ति ही शरण होहू ऐसा जिनेन्द्रका नित्य पूजन करना तथा अष्टाह्निके पर्वमें तथा षोडशकारण दशलक्षण रत्नत्रय

पर्वमैं समस्त पापके आरम्भ छांडि जिनपूजन करना आनन्द सहित नित्य करना वर्णनिकू प्रिय ऐसे चारित्र बनावना तथा स्वर ताल मूर्छनादि सहित जिनेन्द्रके गुण गावने समस्त सन्मार्ग प्रभावना है। सो जिनके हृदयमैं सत्यार्थ धर्म वसै है तिनके प्रभावना होय है। बहुरि जिनेन्द्रके प्ररूमें च्यार अनुयोगनिके सिद्धातनिका ऐसा व्याख्यान करना जाकू श्रवण करनेतें एकाव हृदयतें रचि जाय पापनित कांपने लगिजाय व्यसन छूटि जाय दयारूप धर्ममें प्रवर्तन हो जाय अभक्ष्य भक्षणका त्याग हो जाय ऐसा व्याख्यान करना जाके श्रवण करनेत हजारा मनुष्यनि कुदेव केगुरु कुधर्मके अराधनका त्याग हो मर्ड अर वीतराग देव दयारूपधर्म आरम्भ परिग्रह रहित गुरुनिके आराधनमैं दृढ श्रद्धान हो जाय तथा ऐसा व्याख्यान करना जो श्रवणकरि बहुत मनुष्य रात्रि भोजन अयोग्य भोजन अन्यायका विषय परधनमैं राग छांडि व्रतनिमें शीलमे सयममेवमे सतोषमावमे लीन होय जाय तथा ऐसा उपदेश करना जाकरि देहादिक परद्रव्यनितें भिन्न अपने आत्माका अनुभव होना पर्यायमें आपा छटना जीव अजीवादिक द्रव्यनिका प्रमाणनयनिक्षेपनिकरितिनिर्णय होय संशयरहित द्रव्यगुण पर्यायनिका सत्यार्थ स्वरूप प्रगट होजाना मिथ्या अन्धकार दुरर होना ऐसा आगमका व्याख्यानत तपकरि भावना होय है। क्योंकि विषयानुराग छाडि निर्वाछक हेनेकरि नाहीं धारण किया जाय ऐसे तपकरि प्रभावना होय है। क्योंकि विषयानुराग छांडि निर्वाछक होनेकरि आत्माका प्रभावभी प्रगट होय है अर

धर्मका मार्ग भी तपहीतै दीपै है। यो तप ही दुर्गतिका मार्गको नष्ट करनेवाला है। तप बिना कामादिक विषय ज्ञानकूं चारित्रकू नष्टकरि देहै तपके प्रभावतैं कामका क्षय होय रसना इन्द्रियकी चपलता नष्ट होय लालमाका अभाव होय है यातैं रत्न त्रयकी प्रभावना तपहीतैं दृढ होय है। बहुरि जिनेन्द्रका प्रतिबिम्बकी प्रतीष्ठा करना जिनेन्द्रका मन्दिर करावना यातैं रत्नसन्मार्गकी प्रभावना है जातैं प्रतीष्ठा करावनेकरि जहा ताई जिन बिम्ब रहैगा तहा ताई दर्शन स्तवन पूजनादिकरि अनेक भव्य पुण्य उपार्जन करैगे अर जिनमन्दिर करावैगे तिन गृहस्थनिका ही धनपावना सफल होयगा। पूजन रा त्र जागरण शास्त्रनिका व्याख्यान श्रवण पठन जिनेन्द्रका स्तवन सामायिक प्रतिक्रमण अशनादिक तप नृत्यगान भजन उत्सव जिनमन्दिर होय तदि ही होय जिनमन्दिर विना धर्मका समस्त समागम होय ही नाही यातैं बहुत कहा लिखिये अपना अर परका परम उपकार का मूल प्रतिष्ठा करना अर मंदिर करावनाहै उत्कृष्टधर्मका मार्गतो समस्त परिग्रह छाडि वीतरागका अङ्गीकार करना है परन्तु जाके प्रत्याख्यान वा अप्रत्याख्यान नाम कषायका उपशम भया नाहीं तातैं गृहसपदा छाडि जाय नाहीं अर धनसपदा बहुत होय तो प्रथम तो जिनका आप अन्यायम् धन लिया होय ताके निकट जाय क्षमा ग्रहण कराय उनका धन लोटा देना बहुरि धन बहुत होय तदि नवीनधन उपार्जनका त्याग करना बहुरि तीव्रमार्गके बधावनेवाले इन्द्रियनिके विषयनिकी लालमा छाडि त्याग करि

वात्सल्य है तथा व्रतनिके धारक अर पापतैं भयभीत न्यायमार्गी धर्ममैं अनुरागके धारक मन्दकषायी संतोषी ऐसे श्रावक तथा श्राविका तिनकी गुणनिमैं तिनकी संगतिमैं अनुराग धारण करना सो वात्सल्य है तथा जे स्त्रीपर्यायमे व्रतनिकी हदकूं प्राप्त भये और समस्त गृहादिक परिग्रह छांडि कुटुम्बका ममत्व तजि देहमे निर्ममत्वरूप धार पंच इन्द्रियनिके विषय त्यागि एकवस्त्रमात्र परिग्रहकूं अवलम्बनकरि भूमिशयन क्षुधा तृषा शीतउष्णादि परिग्रह-निकरि सहनेकरि संयमसहित ध्यान स्वाध्याय सामायिकादिक आवश्यकनिकरि युक्त अर्जिकाकी दीक्षा ग्रहणकरि संयम सहित काल व्यतीत करै हैं तिनको गुणनिमैं अनुराग सो वात्सल्यभाव है तथा मुनीश्वरनिकी ज्यों वनमैं निवास करते बाईस परिग्रह सहते उत्तम क्षमादि धर्मके धारक देहमे निर्ममता आपकेनिमित्तक्रिया औषधि अन्न पानादि नाहीं ग्रहण करते एक वस्त्र कोपीनबिना समस्त परिग्रहके त्यागी उत्तम श्रावकनिके गुणनिमे अनुराग सो वात्सल्य है तथा देव गुरु धर्मका सत्यार्थ स्वरूप जानि दृढश्रद्धानी धर्ममें रुचिके धारक अव्रतसम्यग्दृष्टिमें वात्सलयता करहु। इस संसारमें अपने स्त्री पुत्र कुटुम्बादिकनमे तथा देहमे इन्द्रियनिके विषयनिमे विषयनिके साधकनिमे अनादित अति अनुरागी होय याहीके अर्थ कटैं हैं मरै हैं अन्यकूं मारै हैं ऐसा कोऊ कोऊका अद्भुत माहात्म्य है। ते धन्य पुरुष हैं जे सम्यग्ज्ञानतैं मोहकूं नष्टकरि आत्माके गुणनिमें वात्सल्यता करै हैं संसारी लोकनकी लालसाकरि अति आकुल भए धर्ममें वात्सल्यता त्यागे हैं अर

संसारीनिके धन वधे है। क्षमा धर्मका मार्ग भूल जाय धर्मात्मानिमे दूरहोतें वात्सल्यता त्यागे है रात्रिदिन धन सम्पदाके वधावनेमें ऐसा अनुराग वधे है लाखनिका धन हो जाय तो कोटिनिमें वांछा करता आरम्भ परिग्रहकूं वधावता पापनिमें प्रवीणता वधावता धर्ममें वत्सल्य नियमते छांडे है जहा दाना वेंकिनिमें परोपकारमें धन लगावता दीखे तहा दूरहीतें टलि निकले है अर वहु आरम्भ वहु परिग्रह अतितृष्णातें समीप आया नरकका नाम ताकूं नाहीं देखे है यामें पंचमकाल धनाढ्यों तो पूर्वे मिथ्याधर्म कुपात्रदान कुदाननिमें रचि ऐसा कर्म वांधि आया है सो नरक तिर्यंचगतिकी परिपाटी असंख्यातकाल अनंतकाल पर्यन्त नाहीं छुटे उनका तन मन वचन धन धर्मकार्यमें नाहीं लागे है। रात्रि दिन तृष्णा अर आरम्भ करि क्लेशित रहें तिनके धर्मात्मामें अर धर्मके धारणामें कदाचित् वात्सल्यता नाहीं होय है अर धर्मरहित धर्मात्मा हू होय ताकूं नीचा मानें है तातें जो आत्महितके वांछक हो धनसंपदाकूं महामदकी उपजावनेवाली जान अर देहकूं अथिर दुःखदायी जानि कुटुम्बकूं महा बन्धन मानि इनसूं प्रीति छांडि अपने आत्मासूं वात्सल्य करो धर्मात्मामें व्रतीनिमें स्वाध्यायमें जिनपूजनमें वात्सल्यता करो। जे सम्यग्चारित्ररूप आभरणकरि भूपित साधुजन हैं तिनको स्तवन करे है गौरव करे हैं तिनके वात्सल्यनाम गुण है सो दुर्गतिकूं प्राप्त करे है वात्सल्यगुणके प्रभाव करके ही समस्त द्वादशांग विद्या सिद्ध होय है

जातें सिद्धान्तसूत्रम अर सिद्धान्तका उपदेश करनेवाला उपाध्याय म साचा भक्तिक प्रभावतें श्रुतज्ञानावरणकर्मका रस सूकिजाय है तदि सकल विद्या सिद्ध होय है। वात्सल्यगुणके धारकक् दन नमस्कार कर हैं और वात्सल्य करके ही अठारह ऋद्धि प्रऋद्धि दाय प्रकार चारणऋद्धि अनेकप्रकार अर अष्टप्रकार विक्रियाऋद्धि तीन प्रकार बलऋद्धि सप्तप्रकार तपऋद्धि छह प्रकार रसऋद्धि छह प्रकार औषधऋद्धि दाय प्रकार क्षेत्रऋद्धि इत्यादिक अनेक शक्ति प्रगट होय है। इहा ऋद्धिनिका स्वरूप कहिये तो कथनि बधि जाय जातें नाहीं लिख्या है तहांतें जानना। वात्सल्य करके ही मंदबुद्धिनिके हू मतिज्ञान श्रुतज्ञान विस्तीर्ण होय है वात्सल्यके प्रभावतें पापका प्रवेश नाहीं होय है वात्सल्य करके भूषित होय है तपम उत्साह बिना तप निरर्थक है। यो जिनेन्द्र का माग वात्सल्य करि ही शोभाकू प्राप्त होय है। वात्सल्य करिहो शुभ ध्यान वृद्धिकू प्राप्त होय है वात्सल्यतें ही सम्यग्दर्शन निर्दोष होय है। वात्सल्य करके ही दान दिया कृतार्थ होय है। पात्र है प्रीति बिना तथा दानम प्रीति बिना दान निंदा का कारण है जिनवाणीम वात्सल्य जाके होयगा ताहीके उपशमा योग्य साचा अर्थ उद्योतरूप होयगा जाके जिनवाणी वात्सल्य नाहीं विनय नाहीं ताकूं यथावत अर्थ नाहीं दीखैगा विपरीत ग्रहण करेगा इस मनुष्य जन्मका मंडन वात्सल्यही है वात्सल्य रहित बहुत ममताका कारण वस्त्र आरण वस्त्र धारण करना हू पद पदम निन्द्य होय है। अर इस लोकका कार्य जो पशुको

उपार्जन धर्मको उपार्जन धनको उपार्जन सो वात्सल्य हीतैं होय है। अर परलोक जो स्वर्गलोकमें महर्द्धिक वेदना सो हू वात्सल्य हीतैं होय है वात्सल्य विना इस लोकका समस्त कार्य नष्ट हो जाय अर लोकमें देवादिगति नाहीं पावे है। बहुरि अर्हतदेव निर्ग्रन्थगुरू स्याद्वादरूप परमागमदया रूपधर्ममें वात्सल्य है सो संसार परिभ्रमणका नाशकरि निर्वाणकूं प्राप्त करै है तथा वात्सल्यतैंही जिनमन्दिरका वैयावृत्य जिनसिद्धान्तका सेवन साधर्मीनिका सेवन साधर्मीनिका वैयावृत्य तथा धर्ममें अनुराग दान देनेमें प्रीति ये समस्तगुण वात्सल्यतें हो होय है जे षटकायके जीवनिमें वात्सल्य किया है ते ही त्रैलोक्यमें अतिशय रूप तीर्थंकर प्रकृति का उपार्जन करै है यातैं जे कल्याणके इच्छक हैं ते भगवान जिनेन्द्रका उपदेश्या वात्सल्यगुणको महिमा जानि पोडशमा अङ्ग जो वात्सल्य ताका स्तवनकरि पूजनिकरि याका महान अर्घ उतारण करै सो दर्शनको विशुद्धता पाय बहुरि तप उचारणकरि अहमिन्द्रादि देवलोककूं प्राप्त होय फिरि जगतका उद्धारक तीर्थंकर होय निर्वाणकूं प्राप्त होय है। पोडश कारण धर्मका महिमा अचिन्त्य है जातैं त्रैलोक्यमें आश्चर्यकारी अनुपम विभव के धारक तीर्थंकर होय हैं, ऐसे पोडश भावनाका वर्णन किया है ॥१६॥

अब धर्मका स्वरूप दश लक्षण है इन दश चिन्हनिकरि अन्तर्गतधर्म जानिये है। उत्तमक्षमा, उत्तममार्दव, उत्तमआर्जव उत्तमसत्य, उत्तमशौच, उत्तमसंयम, उत्तमत्याग, उत्तमआकिं-

त्य, उत्तमब्रह्मचर्य ये दशधर्मके लक्षण है। अति धर्म तो वस्तुका स्वभावहीकूं कहिये है लोकमें जेते पदार्थ हैं तितने अपने स्वभावकूं कदाचित नाहीं छांडे हैं। जो स्वभावका नाश हो जाय तो वस्तु अभाव होय नाहीं आत्मानाकै वस्तुका स्वभाव क्षमादिरूप है अर क्रोधादिक कर्मजनित उपाधि है आचरण है क्रोध नाम धर्मका अभाव होय तदि क्षमा नाम आत्माका स्वभाव स्वयमेव रहै है एसही मानका अभावतै शौचगुण इत्यादिक आत्माके गुण है ते कर्मके अभावतै स्वयमेव प्रगट होय है तातै ये उत्तमक्षमादिक आत्माका स्वभाव हैं मोहनीय कर्मके अभावतै स्वयमेव प्रगट होय है तातै ये उत्तमक्षमादिक आत्मा का स्वभाव है मोहनीय कर्मके भेद क्रोधादिक कषायनिकरि अनादिका अच्छादित होय रहे है कषायके अभावतै क्षमादिक स्वाभाविक आत्माका गुण उघडे है।

अब उत्तमक्षमागुणकूं वर्णन करे है क्रोध वैरीका जीतना सो उत्तमक्षमा है कैसाक है क्रोध वैरी इस जीवके विश्राम करने का स्थान जे समभाव निराकुलताभाव ताकूं दग्ध करनेकूं अग्नि समान सम्यग्दर्शनादिक रत्नका भण्डारकूं दग्ध करै है यशकूं नष्ट करै है अपयशरूप कालिमाकूं वधावै है धर्म अधर्मका विचार नष्ट होय जाय है क्रोधीके अपना मन वचन काय आपके वश नाहीं रहे है। बहुत कालकी प्रीतिकूं क्षणमात्रमें बिगाडि महान वैर उत्पन्न करै है क्रोधरूप राक्षसके वश होय सो असत्य वचन लोकनिन्द्य भील चांडालादिकनिके बोलने योग्य वचन

चोलै है । क्रोधी समस्त धर्म लोपै है क्रोधी होय तब पिताने मारि नाखै माताकूं पुत्रकूं स्त्रीकूं बालककूं मित्रकूं मारि प्राण रहित करै है । अर तीव्र क्रोधी आपका हू विषर्ते शस्त्रतैं मरण करै है ऊंचे मकान तथा पर्वतादिकतैं पतन करै है कूपमें पडै है क्रोधीकी कोऊ प्रकार प्रतीत नाहीं जाननी । क्रोधी है सो यमराज तुल्य है क्रोधी होय सो प्रथम तो अपना ज्ञानदर्शन क्षमादिक गुणनिकूं घातै पीछे कर्मके वशतैं अन्यका घात होय क्रोधके प्रभावतैं महातपस्वी दिगम्बरमुनि धर्मतैं भ्रष्ट होय नरक गये हैं । यो क्रोध है सो दोऊ लोकका नाश करै है महा पापबन्ध कराय नरक पहुंचावै है बुद्धि भ्रष्ट करै है निर्दयी करदे है अन्य कृत उपकारकूं भुलाय कृतघ्न करै है तातैं क्रोधसमान पाप नाहीं इसलोकमें क्रोधादिकषाय समान अपना घात करनेवाला अन्य नाहीं है जो लोकमें पुन्यवान है महाभाग्य है जिनका दोऊ लोक सुधरना है तिनहीके क्षमा नाम गुण प्रकट होय है क्षमा जो पृथ्वी ताको ज्यों सहनेका स्वभाव होय सो क्षमा है अर सम्यक् स्वपरकूं समझकरि जो असमर्थनिकरि किया हू उपद्रवनिकूं आप समर्थ होय करके रागद्वेष रहित होनेकूं कह्या है । उत्तम क्षमा त्रैलोक्यमें सार है उत्तम क्षमा संसार समुद्रतैं तारनेवाली है उत्तम क्षमा है सो रत्नत्रयकूं धारण करनेवाली है उत्तम क्षमा दुर्गतिके दुःखनिके हरनेवाली है जाके क्षमा होय ताके नरक अर तिर्यंच दोऊ गतिनमें गमन नाहीं होय है उत्तम क्षमाका लार अनेक गुणनिके [illegible] होय है मुनीश्वरनिकूं तो अति

उत्तम क्षमा है उत्तम क्षमाका लाभकू ज्ञानीजन चिन्तामणिरत्न माने है अर उत्तम क्षमाकी मनको उज्ज्वलता करे है क्षमा गुण-विना मनकी उज्ज्वलता और स्थिरता कदाचितही नाहीं होय है वांछित सिद्ध करनेवाली एक क्षमा ही है। इहां क्रोधके जीतने की भावना ऐसी जाननी— कोऊ आपकू दुर्वचनादि करि दुःखित करे गाली दे चोर कहै अन्यायी पापी दुराचारी दुष्ट नीच या दोगलो चांडाल पापी कृतघ्नी ऐसें अनेक दुर्वचन कहै तो ज्ञानी ऐसी भावना करे जो याका मैं अपराध किया मैं कि नाहीं किया है। जो मैं याका अपराध किया तथा रागद्वेष मोहका वशतैं कोई बात करि दुखाया है तदि तो मैं अपराधी हू मोकू गाली देना धिक्कार देना नीच चोर कपटी अधर्मी कहना न्याय है। मोकू इस सिवाय भी दण्ड देना सो भी ठीक है मैं अपराध किया है मोकू गाली सुनि रोष नाही करना हो उचित है। अपराधी हू नरकमें दण्ड भोगना पडे है तातें मेरा निमित्तकरि याके दुःख भया तदि क्लेशित होय दुर्वचन कहै है ऐसा विचार करि क्लेशित नाहीं होय क्षमाही करे है अर जो दुर्वचन कहनेवाला मंद-कषायी होय तो आप जाय क्षमा ग्रहण करावनेकू कहै भो कृपाल मैं अज्ञानी प्रमादके वशतें कषायनके वश होय तो आपका चित्तकू दुखाया सो अब मैं अपराध माफ कराऊ हू आगामें ऐसा कार्य चूककरि नाहीं करूंगा एकवार चूकिजाय ताकी चूककू महतपुरुष माफ करे हैं अर जो आगलो न्याय रहित तीव्र कषायी होय तो याका अपराध माफ करावनेको जाय नाहीं कोला-

तरमें क्रोध उपशांत हुवा पाछे माफ करावै अर जो आप अपराध नहीं किया अर ईर्षामानतैं केवल दुष्टतातैं आपकूं दुर्वचन कहै तथा अनेक दोष लगावै तो ज्ञानी किंचित्मक्लेश नाहीं करे ऐसा विचारै जो मैं याका धन हऱ्या हो तथा जमी, जायगा खोसी होय तथा याकी जीविका बिगाडी होय चुगली खाई होय तथा याका दोष कहणादि करके जो मैं अपराध किया होय तो मोकूं पश्चात्ताप करना उचित है अर जो मैं अपराध नहीं किया तदि मोकू कुछ फिकर नाहीं करना ये दुर्वचन कहै है सो नामकूं कहै है सो नाम मेरा स्वरूप नाहीं मैं तो ज्ञायक हूं जाकूं कहै सो मैं नाहीं। मैं हूं ताकूं वचन पहुंचे नाहीं तातैं मोकूं क्षमा ग्रहण करना ही श्रेष्ठ है। बहुरि जो ये दुर्वचन कहै है सो मुख याका, अभिप्राय याका जिह्वा दंत ओष्ठ याका अर शब्द, अर पुद्गल याका परिणामनिकरि शब्द उपज्या ताका श्रवणकरि मैं जो विकारको प्राप्त होऊं तोया मेरी बडी अज्ञानता है बहुरि जो ईर्षावान दुष्ट पुरुष मेरेकूं गाली देहै सो स्वभाव करि देहिए तो गाली कुछ वस्तु ही नाहीं है मेरे कहीं हू गाली लगे नाहीं दीखै हू अवस्तुमें देने लेनेका व्यवहार ज्ञानी होय सो कैसे सङ्कल्प करै। बहुरि जो मोकूं चोर कहै अन्यायी कपटी अधर्मी इत्यादिक कहै तहां ऐसा चिन्तवन करे जो हे आत्मन! तू अनेक बार चोर हुआ अनेक जन्ममें व्यभिचारी, ज्वारी, अभक्ष्य भक्षी, भील, चांडाल, चमार, गोला, चंदा, कूकर, शूकर, गाधा इत्यादिक तिर्यंच तथा अधर्मी, पापी, कृतघ्नी होय आया

अर संसारमें भ्रमण करता अनेक बार होऊंगा अब तो कूकर शूकर चोर चांडाल कहै तिनकू श्रवण करि ताकूं कलेशित होनां बडा अनर्थ है अथवा ये दुष्टजन दुर्वचन कहै है सो याकों अपराध नाहीं हमारा बांध्या पूर्व जन्मकृत कर्मका उदय है सो याके दुर्वचन कहनेके द्वारकरि हमारे कर्मको निर्जरा होय है सो हमारे बडा लाभ है इनका यह हू उपकार है जो दुर्वचन कहनेवाले अपना पूर्णका समूहका तो दोष कहने करि नाश करे हैं अर मेरे किये पापकूं दूरि करे हैं ऐसे उपकारीतैं जो मैं रोष करूं तो मी समान कोउ अधम नाहीं है। बहुरि या तो मोकूं दुर्वचन ही कह्या है मार्‍या तो नाहीं रोषकरि मारने लगि जाय है क्रोधी यो अपने पुत्र पुत्री स्त्री बालादिककूं मारे है सो मोकूं मार्‍या नाहीं गयो भी लाभ है अर जो दुष्ट आय मारे तो ऐसा विचारे जो मोकूं मार्‍या ही प्रमाण रहित तो नाहीं किया दुष्ट तो अपका मरण नाहीं गिन करके भी अन्यकूं मारै है यो भी मेरे लाभ है। अर जो प्राण रहित करै तो ऐसा विचारै एकवार मरणा हो छो कर्मका ऋण चुकयो। हम इहां ही कर्मके ऋण रहित भये हमारा धर्ममें तो नाहीं नष्ट भया। प्राणधारण तो धर्म हीतैं सफल है ये द्रव्यप्राण तो पुद्गलमय हैं मेरा ज्ञान दर्शन क्षमादि धर्म ये भावप्राण हैं इनका घात क्रोधकरि नहीं भया इस समान मेरे लाभ नाहीं है। बहुरि जो कल्याणरूप कार्य हैं तिनमें अनेक विघ्न आवै ही है जो मेरे विघ्न आया सो ठीक ही है। मैं तो अब समभावका आश्रय करूं अर जो उपद्रव आवते हैं

क्षमा छोडि विकारारूप प्राप्त हूंगा तो मेकूं देखि अन्य मदज्ञानी तथा कायर त्यागी तपस्वी धर्म तैं शिथिल हो जायगे तो मेरा जन्म केवल अन्यके क्लेशके अर्थि हो भया तथा मैं वीतरागधर्म धारण करकें हू क्रोधी विकारा दुर्वचनी होऊं तो माकू देखि क्रोधमे प्रवर्तने लगिजाय तदि धर्मकी मर्यादा भगकरि पापकी परिपाटी चलानेवाला मैं हो प्रधान भया तातें क्षमागुणा प्राण जाते हू धन अभिमान नष्ट होने हू मेकू छांडना उचित नहीं बहुरि पूर्वमे ही अशुभ कर्म उपजाया ताका फल मैं ही भोगूगा अन्य जे जन है तेतो निमित्तमात्र है इनके निमित्त तें पाप उदय नाहीं आता तो अन्यके निमित्ततैं आता। उदयमें आया कर्म तो फल दिये विना टलता नाहीं बहुरि ये लौकिक अज्ञानी मेरे विषे क्रोधित होय दुर्वचनादिक करि उपद्रव करें हैं अर जो मैं भी यातें दुर्वचनादि करि उत्तर करू तो मैं तत्वज्ञानी अर ये अज्ञानी दोऊ समान भया हमारा तत्त्वज्ञानीपना निरर्थक भया न्यायमार्गतें उदयमें आया मेरा पापकर्म ताकू सन्तुष्ट होते कौन विवेकी अपना आत्माकूं क्रोधादिकनिके वश करें। भो आत्मन् पूर्वे बांध्या जो असाताकर्म ताका अब उदय आया ताकू इलाज रहित अराकुलानि करकें समभावनितें सहो जो क्लेशित होय भोगोगे तो आसाताकू तो भोगोहागे अर नवीन बहुत असाताका बंध और करोगे तातें होनहार दुःखतैं निःशंकित होय समभावनितैं हो सहो ये दुष्टजन बहुत हैं अपना सामर्थ करकैं मेरे दोषरूप अग्निक करि मेरा समभावरूप सम्पादकक

चाहै हैं अर यहां जो आमावधान होय क्षमाकूं छाडों यांगा तो अवश्य ही साम्यभाव नष्ट करि धर्म अर अपयशका नाश करने वाला होय जाऊंगा तातैं दुष्टनिका संसर्गमें सावधान रहना उचित है। ज्ञानी मनुष्य तो नाहीं सह्या जाय ऐसा क्लेशकूं उत्पन्न होने हू पूर्वकर्मका नाश होना जानि हर्षित ही होय हैं जो वचन कंटकनिकरि वेध्या जो मैं क्षमा छोडदूंगा तो क्रोधो अर मैं समान भया अर जो वैरी नाना प्रकारका दुर्वचन मारण पीडन करिकें मेरा इलाज नहीं करै तो मैं संचय किये अशुभकर्म तिनतैं कैसे छूटता तातैं वैरी हू हमारा उपकार ही किया है अथवा तातैं निर्विकी होय जो जिन आगमके प्रमादतैं अभ्यास किया ताकी परीक्षा लेनकूं ये वैरीरूप परीक्षा स्थान प्रगट भया हैं सो मेरे भावनिकी परीक्षा करनेके ही कर्म उदय भये हैं जो समभावकी मर्यादाकूं भेद करि जो मैं वैरिनिमें रोष करूं तो ज्ञाननेत्रको धारक हू मैं समभावकूं नाहीं प्राप्त होय क्रोधरूप अग्निमें भस्म होय जाऊं। मैं वीतरागके मार्गमें प्रवर्तन करनेवाला संसारकी स्थिति छेदनेमैं उद्यमी अर मेरा ही चित्त जो द्रोहकूं प्राप्त हो जाय तो संसारके मार्गमें प्रवर्तते मिथ्यादृष्टीनिके समान मूढ़ भयो अर जो दुष्टनिकूं न्याय धर्मरूप मार्ग समझाया अर क्षमा ग्रहण कराया जो नाहीं समझै अर क्षमा ग्रहण न करै तो ज्ञानीजन वासूं रोष नाहीं करै। जैसे विष दूरि करनेकूं अनेक औषधादि देय विष दूरि कर्‍या चाहे अर वाका जहर दूरि नाहीं होय तोवैद्य जहर नाहीं राम है जो याका विष दूर नाहीं भया तो मैं

हू विष भक्षणकरि करू ऐसा न्याय नाहीं है तैसे ज्ञानीजनहु दुष्ट जनकी पहली दुष्टताकी जाति पिछानै जो यो दुष्टता छोंडेगा, या अधिक दुष्टता धरैगा ऐसा विचार जो विपरित परमाणता देखि ताकू तो उपदेश ही नाही देना अर कुछ समझने लायक योग्यता दीखै तो न्याय वचन हितमितरूप कहना अर दुष्टता नाही छाडै तो आप क्रोधी नाही होना जो यो मोकू दुर्वचनादि उपद्रवकरि नाहीं कषायमान करै तो मे उपशम भावकरि धर्मका शरणा कैसे ग्रहण करता तातैं मोकू पीडा करनेवाला हू पापतैं भयभीत करि धर्मसू सम्बन्ध कराया हैं तातैं पीटा करनेवाला है मेरा प्रमादीपना छुडाय बडा उपकार किया है। बहुरि जगतमें केतेक उपकारी तो ऐसे हैं जो अन्यजनके सुख होनेके निमित्त अपना शरीरकू छाडै हैं अर धनकू छाडै है तो मरे दुर्वचन बन्धनादिक सहनेमें कहा जायगा मोकू दुर्वचन कहे ही अन्यके सुख हो जाय तो मेरे क्या हानि है। बहुरि जो अपनेकू पीटा करनेवालेतै रोश करू तो वैरीके पुण्यका नाश होय है अर मेरे आत्माके हितकी सिद्धि होय है अर पीडा करनेवालेत रोप करू तो मेरा आत्मोका हितका नाम होय दुर्गति होय यातैं प्राणनिका नाश होते हू दुष्टनिप्रति क्षमा करना ही एक हित सत्पुरुष कहैं हैं, तातैं आत्मकल्याणकी सिद्धिके अर्थिक्षमा ही ग्रहण करूं, अथवा दुष्टनिकरि दुर्वचनादिक पीडा करनेतैं मेरे जो क्षमा प्रगट भई है जो मैं इतना कालतैं वीतरागका धर्म धारण किया सो अब क्रोधादिकके निमित्तते साम्यभाव रह्या ऐसी परीक्षा करूं। बहुरि

सोई साम्यभाव प्रशंसा योग्य है अर सोही कल्याणनिका कारण है जो मनके इच्छा निर्दयीनिकरि मलीन नाहीं किया गया। बहुरि चिरकालतें अभ्यास किया शास्त्र करके अर स्वभाव करके कहा साध्य है जो प्रयोजन पड्या व्यर्थ हो जाय है धर्म सो ही प्रशंसा योग्य है जो दुष्टनिके दुर्वचनादि हाते नाहीं छूटै दृढ रहै उपद्रव आये बिना तो समस्तजन सेव्य शौच क्षमाके धारक बन रहे है जैसे चन्दन वृक्ष कुहाडा काटै तौ हू कटाडेका सुगध सुगध ही करै तैसे जाकी प्रवृत्ति होय सोही सिद्धि साध्य है। बहुरि अन्यकरि किया उपसर्ग तिनकरि जाका चित्त कलुषित नाहीं होय सो अविनाशी सम्पदाकू प्राप्त होय है। अज्ञानी है तें अपने भावनिकरि पूर्वें किया पापकर्म ताके अर्थि तो नाही ताप करै अर जो कर्मके फल देनेके बाह्यनिमित्त क्रोध करै है जिस कर्मका नाशतें मेरा संसारका संताप नष्ट हो। जाय सो कर्म इसमें होयगा तो मेरें वांछित सिद्ध भया। बहुरि यो संसाररूप वन अनन्त संक्लेशनि करि भर्‍या है इसमें वसनेवाला के नाना प्रकारके दुःख नाहीं सहने योग्य हैं। कहा? संसारमैं यो दुःख ही है जो इस संसारमैं सत्यग्यान विवेककरि रहित अर जिन सिद्धान्ततैं द्वेष करनेवाले अर महानिर्दयी अर परलोकका हितके अर्थि जिनके बुद्धि नाहीं अर क्रोधरूप अग्निकरि प्रज्वलित अर दुष्टताकरि सहित विषयनिकरि लोलुपताकरि अन्ध हठग्राही महा अभिमानी कृतघ्नी ऐसे बहुत दुष्टजन नाहीं होते तो उज्वल ...के धारक सत्पुरुष व्रत तप तपश्चरणकरि मोक्षके अर्थि

उद्यम करैं करते हैं। ऐसे क्रोधी दुर्वचनके बोलनेहारे हठग्राही अन्यायमार्गीनिको अधिकता देखि कर्मकेरी प्रत्युत्प वीतरागी भये हैं अर जा मैं बड़े पुण्यके प्रभावतैं परमात्माके स्वरूपका ज्ञाता भयो अर सर्वज्ञकरि उपदेश्या पदार्थनिकूं हूं जो क्रोधके वश हूंगा तो मेरा ज्ञान चारित्र समस्त निष्फल होयगा अर धर्मका अपयश करावनहारा होय दुर्गतिका पात्र हूंगा। बहुरि और हू पद्मनदिमुनि कह्या है जो मूर्खजनकरि बाधा पीडा अर क्रोधके वचन और हास्या अर अपमानादिक होते हू जो उत्तम पुरुषनिका मन विकारकूं प्राप्त होय ताकूं उत्तम क्षमा कहिये है। सो क्षमा मोक्षमार्गमैं प्रवरतते पुरुषके परम सहायताकूं प्राप्त होय है। विवेकी चिंतवन करै है हम तो रागद्वेषादि मलरहित उज्वल मनकरि तिष्ठा अन्यलोक हमकूं खोटा कहो तथा भला कहो हमकू कहा प्रयोजन है। वीतरागधर्मके धारकनिकूं तो अपने आत्माका शुद्धपना साधने योग्य है जो हमारा परिणाम दोष सहित है अर कोऊ हित हमकूं भला कह्या तो भला नाहीं होजांगे अर हमारा परिणाम दोषरहित है अर कोऊ हमकू वैरबुद्धि तैं खोटा कह्या तो हम खोटा नाहीं हो जायगे फल तो अपनी जैसी चेष्टा आचरण होयगा तैसा प्राप्त होयगा जैसे कोऊ काचकूं रत्न कह दिया अर रत्नकूं कांच कह दिया तो हू मोल तो रत्नकाही पावेगा काचखण्डका बहुत धन कौन देवै। बहुरि दुष्टजन है ताका तो स्वभाव परके दोष कहो हू नाहीं होय तो हू परके दोष कह्या विना सुखकूं प्राप्त नाहीं होय तातैं

निर्दयी ही होय है मार्दवगुण समस्तकेहित करनेवाला है । जिनके मार्दवधर्मके प्रसादतें चित्तरूप भूमिमैं करुणारूप वेल नवीन फलै है मार्दवकरके ही -जिनेन्द्रभगवानमैं तथा शास्त्रनिमैं भक्तिका प्रकाश होइ है मद -सहितकै जिनेन्द्रके गुणनिम अनुराग नाहीं होय है मार्दवगुणकरि कुमतिनान के प्रमारका नाश होय है कुमति नाहीं फलै है अभिमानीके अनेक कुबुद्धि उपजै है । मार्दवगुणकरि वडा विनय प्रवर्तै है मार्दव करकै बहुत कालका वैरी हू वैर छाडै है मान घटै तदि परिणामनिकी उज्वलताहोय कोयल परिणाम करकै ही दाऊ लोकको सिद्धि होय कोमलपरिणामीकूं इस लोकमैं सुयमहोय है परलोकमें दवलोकको प्राप्ति होय है कोमल परिणाम करिके हो अन्तरङ्ग वहिरग तपभूषित होय है अभिमानोका तप हू नि दवे योग्य है कोमलपरिणमोतै तीनजगत लोकनिका मन रजायमान होय है मार्दव करके ही जिनेन्द्रका शासन जानिये है मार्दव करके अपना परका स्वरूपका अनुभव करिये है कठोर परिणामीके आपा परका विवेक नाहीं होय है मार्दव करके ही -समस्त दोषनिका नाश होय है मार्दवपरिणाम समारसमुद्रतै पार करै है । यातै मार्दवपरिणामकू सम्यग्दर्शन अग जानि निर्मल मार्दवधर्मका स्तवन करो । समारी जीवनिकै अनादिकालका- मिथ्यादर्शनका- उदय राहा है ताका उदयकरि पर्यायबुद्धि हुआ जातिकू, कुलकू, -विद्याकू, बलकू, तपकू, -धनकू, अपना स्वरूप मानि

। ताकू ये ज्ञान नाहीं है जो ये

समस्त निन्दा करैं हैं, अभिमानीका ममस्व लोक पवन होना चाहे स्वामी हू अभिमानी सेवकक त्यागे हैं अभिमानीकू गुरुजन विद्या दने, उत्साह रहित होय हैं अपना सेवक परागमुख हो जाय मित्र, भाई, हितू, पडोसी, याका पतनही चाहहैं पिता गुरु उपाध्यायते पुनक विनयवन्त देख करिही आनन्दित होय हैं। अविनयी अभिमानी पुत्र वा शिष्य बडे पुरुषनके कनहूकू सतावित करै हैं जातें पुत्रका तथा शिष्यका तथा सेवकका तो ये ही धर्म हैं जो नवीन कार्य करना होय सो पिता गुरु स्वामीकू जनायकरि करै आज्ञा मागि करैं तथा आज्ञाको अवसर नाहीं मिलै तो अवसर देखि शीघ्रही जनावै योही विनय हैं याही भक्ति है जाके मस्तकउपरि गुरू विराजते धन्यभाग हैं विनयवन्त रहित पुरुष हैते समस्त कार्य गुरुनिको जनाय दे हैं जे इस कलिकालमें मदरहित कोमल परिणाम करि समस्तलोकम प्रवर्तें हैं। उत्तम पुरुष है तो बालकमेंनिर्धनम रोगीनिमे बुद्धिरहित मूर्खनिमे तथा जाति कुलादिहिनम हू यथा योग्य प्रियवचन आदर सत्कार स्थानदान कदाचित नाही चूकै हैं प्रियवचन ही कहैंउतम पुरुष उद्धतताका वस्त्र आभरण नाहीं पहरे ऊद्धतपणाका परके अपमानका कारण देनलेन विवाहादि व्यवहारकार्य नाहीं करे हैं उद्धत होय अभिमानीपनाका चालना बैठना, झाकना, दूरहीतैं छाडे ताकै लोकम पुन्य मार्दवगुण है। धमपावना, रूपपावना, ज्ञानपावना, विद्याकलचतुराईपावना, बलपावना, जातकुलादिउतम गुण जगतमान्यता पावना, जिनका सफल हैं जो ऊद्धतता रहित

अभिमानरहित नम्रतासहित विनय सहित प्रवर्तै, है अपने मनमें आपकू सर्वतै लघु मानता कर्मके परवश जाने हैं सो कैसे नाही करे हैं। भव्यजन हो सम्यग्दर्शनका अग इस मार्दव अगकू जानि चित्तके विषै ध्यान करो। ऐसे मार्दवधर्मका वर्णन कियो ॥२॥

अब आर्जवधर्मकू वर्णन करैं हैं—धर्मका श्रेष्ठ लक्षण आर्जव नाम सरलताका है मन वचनकायकी कुटिलता अभाव सो आर्जव है। आर्जव धर्म है सो पापका खण्डन करनेवाला है और सुख उपजावनेवाला है। तातैं कुटिलता छाडि कर्मका क्षय करनेवाला आर्जवधर्म धारण करो। कुटिलता है सो अशुभ कर्मका बन्ध करनेवाली है जगतमैं अतिनिंद्य है यातै आत्मका हितका इच्छनिकू आर्जवधर्मका अवलम्बन करना उचित है। जैसा आपका चित्तमै चिन्तवन करिये तैसा ही अन्यकू कहना अर तैसा ही वाह्यकायकरि प्रवर्तन करिये सो सुखका सचय करने वाला आर्जवधर्म कहिये है। मायाचाररूप शल्य मनतैं निकालो उज्वल पवित्र आर्जवधर्मका विचार करो मायाचारीका व्रत तप सयम समस्त निरर्थक है आर्जवधर्म निर्वाणके मार्गका सहाई है जहा कुटिलवचन नाहीं बोले तहा आर्जवधर्म प्राप्त होय है। यो आर्जवधर्म है सो दर्शनज्ञानचारित्रको अखण्ड स्वरूप है अतीन्द्रिय सुखका पिटारा है आर्जवधर्मका अभावकरि अतीन्द्रिय अविनाशी सुखकू प्राप्त होय है ससाररूप समुद्रके तरनेकू जहाजरूप आर्जव

हो है। मायाचार जान्या जाय तदि प्रीतिका भंग होय है। जैसे काजीतैं दुग्ध फटि जाय है अर मायाचारी अपना कपटकूं बहुत छिपानते हू प्रगट हुये बिना नाहीं रहे है। पापीजीवनि की चुगली करे वा दोष प्रकाशै ते आपही प्रगट हो जाय है मायाचार करना है सो अपनी प्रतीतका बिगाडना है धर्म बिगाड़ना है मायाचारीका समस्त हितबिना कियेंनरो होय है व्रतीहोय त्यागी तपस्वी होय अर जाकाकपट एकबार कियाहू प्रगटहो जाय ताकू समस्तलोक अधर्मीमानि कोऊ प्रतीत नाहीं करे है कपटी की माता हू प्रतीत नाही करे है कपटी तो मित्रद्रोही स्वामीद्रोही धर्मद्रोही कृतघ्नी है अर यो जिनेन्द्रको धर्म तो कपटरहित छल रहित है जैसे खारा स्थानमें सूधा गडग प्रवेश नाहीं करे तैसें कपटकरि वक्रपरिणामीका हृदयमें जिनेन्द्रका आर्जव कहिये सरल धर्म प्रवेश नाहीं कर सके है। कपटीका दोऊलोक नष्ट हो जाय है याते जो यश चाहोहो धर्म चाहोहो प्रतीत चाहो हो तो मायाचारका त्यागकरि आर्जवधर्म धारण करो कपटरहितकी वैरी हू प्रशंसा करे है कपटरहित सरलचित्त जो अपराध भी किया होय तो दन्ड देने योग्य नाही होय है आर्जव धर्मका धारक तो परमात्माका अनुभवनमें मस्तप करे है स्वाय जीतनेका संतोप धारनेका सकल्प करे है जगतके छलनिका दूरहीतें परिहार करे आत्माकू असहाय चैतन्यमात्र जाणे है जो धनसम्पदा कुटुम्बादिककू अपनाये सो ही कपट छलकरि ठिगाई करे ताते जो आत्माकू संसार परिभ्रमणतें छुटाय परद्रव्यनितैं आपकू भिन्न

असहाय जाने सो धनजीवितव्यके अर्थि कपट कदाचित् नाही करै तातैं जो आत्माकूं संसार परिभ्रमणतैं छुडाय चाहो तो मायाचारका परिहारकरि आर्जवधर्म धारण करो। ऐसैं आर्जवधर्मका वर्णन किया ॥३॥

अब सत्यधर्मका वर्णन करे हैं—जो सत्यवचन है सो ही धर्म है यो सत्यवचन दयाधर्मकी अब मूल कारण है अनेक दोषनिका निराकरण करनेवाला है इस भवमैं तथा परभवमैं सुख करनेवाला है समस्तके विश्वास करनेका कारण है समस्तधर्मके मध्य सत्यवचन प्रधान है सत्य है जो संसार समुद्रके पारउतरनेकू जहाज है समस्त निधाननिमैं सत्य है सो बडा निधान है समस्त सुखका कारण सत्य ही है सत्यतैं ही मनुष्यजन्मभूषित होय है सत्य करके समस्त पुण्यकर्म उज्जल होय है जे पुण्यके ऊँचे कार्य करिये हैं तिनकी उज्जलता सत्य विना नाही होय है सत्य करि समस्त गुणनिका समूह महिमाकू प्राप्त होय है सत्यका प्रभावकरि देव हैं ते सेवा करे हैं सत्यकरके ही अणुव्रत महाव्रत होय हैं सत्यविना व्रत संयम नष्ट हो जाय है सत्यकरि समस्त आपदाको नाश होय है यातैं जो वचन बोलो सो अपना परका हितरूप कहो प्रमाणीक कहो कोऊकै दुःख उपजै ऐसावचन मति कहो गर्वरहित कहो, परमात्माके अस्तित्व कहनेवाला वचन कहो नास्तिकनिके वचन पापपुण्यका स्वर्गनरकका अभाव कहनेवाला मति कहो यहां ऐसा परमागमका उपदेश जानना जो जीव

अनन्तानन्तकाल तो निगोदमैं ही रह्या तहां वचनरूप कर्मवर्गणा ग्रहण नाहीं करी क्योंकि पृथ्वीकाय अपकाय तेजकाय वायुकाय वनस्पतिकाय इनके मध्य अनन्तकाल असंख्यातकाल असंख्यात काल रह्यो तहां तो जिह्वा इन्द्रियही नाही पाई बोलनेकी शक्ति ही नाही पाई अर जो विकल चतुष्यमैं उपज्या तथा पंचेंद्रिय तिर्यंचनमैं उपज्या तहा जिह्वा इन्द्रिय पाई तो हू अक्षरस्वरूप शब्द उच्चारण करनेको सामर्थ्य नाहीं भया एक मनुष्यपनामैं वचन बोलनेकी शक्ति प्रगट होय है। ऐसा दुर्लभवचनकूं असत्य बोलि विगाडि देना सो बडा अनर्थ है मनुष्यजन्मकी महिमा तो एक वचनहीतैं है नेत्र कर्ण जिह्वा नासिका तो ढोर तिर्यंचके हू होय है खावना पावना भोगादिक पुण्य पापके अनुसारनिकूं हू प्राप्त होय है आभरण वस्त्रादिक कूकरा सिंह बानरा, गधा, घोडा, ऊंट, बलध इत्यादिकनिको हू मिलै है परन्तु वचन कहनेका शक्ति श्रवन करनेकी शक्ति तथा उत्तर देनेकी शक्ति तथा पढने पढावनेका कारण वचन तो मनुष्यजन्ममैं ही है और मनुष्यजन्म पाय जो वचन विगाडि दिया सो समस्तजन्म विगाड दिया। बहुरि मनुष्यजन्ममैं जो लेना देना कहना सुनना धीज प्रतीत धर्मकर्म प्रीतवैर इत्यादिक जे प्रवृत्तिरूप और निवृत्तरूप कार्य है ते वचनके आधीन हैं अर वचनकूं ही दूपित कर दिया। तदि समस्त मनुष्य जन्मका व्यवहार विगाडि दूपित कर दिया। तातैं प्राण जाते हू अपना वचनकू दूपित मत करो। बहुरि परमागममैं कह्या जो च्यारप्रकारका असत्यवचन ताका त्याग

करो जो विद्यमान अर्थका निषेध करना सो प्रथम असत्य मे जसे कर्मभूमिका मनुष्य तिर्यचका अकाल मृत्यु नाहो होय ऐसा वचन असत्य है जातै देखनारको तथा भोगभूमिका मनुष्य तिर्यचका तो आयुकी स्थिति पूर्ण भया ही मरण है बीच आयु नाहीं छिदै है जितनी स्थिति बांधी तितनो भोग करके ही मरण करै है अर कर्मभूमिका मनुष्यतिर्यचगनिका आयु है विषय भक्षणकरि तथा ताडन मारण छेदन बधनादिक वेदनाकरि तथा रोग की तीव्र वेदनकरि देहतै रुधिका नाश होनेकरि तथा दुष्ट मनुष्य दुष्टतिर्यच भयकर दवकरि उपज्या भयकरि तथा वज्रपातादिकका स्वचक्र परचक्रादिक के भयकरि तथा शस्त्रका घातकरि तथा पर्वतादिकतै पतन-करि तथा अग्नि पवन जल कलह विसवादादिकतै उपज्या क्लेश करि तथा सास उस्वासका धूमादिकतै रुकनेकरि तथाआहारपाना दिका निरोध करि आयुका नाश होय है आयुकी दीर्घस्थिति हू विषभक्षण रक्तक्षय भय शस्त्रघात सक्लेश सासोस्वास निरोधकरि अन्नपानका अभावकरि तत्काल नाशकू प्राप्त होय ही है। केते लोक कहै हैं आयु पूरो हुआ विना मरण नाहो होय ताका उत्तर करै है जो बाह्य निमित्तकू आयु नाहीं छिदे तो विषभक्षणतै कोन पराङ्मुख होता अर विष खानेवालेकू उकाली काहेकू देते अर शास्त्रघात करनेवालेतै काहेकू भयकरि भागतै अर सर्प सिंह व्याघ्र हस्ती तथा दुष्ट मनुष्य तिर्यचादिकनिकू दूरहीतै काहेकू छाड़ते ... समुद्र, कूप, बावडीमें तथा अग्निको

पडते कौन भय करता अर रोगका इलाज काहेकू करते तातैं बहुत कहनेकरि कहा जो आयुघात होनेका बाह्य कारण मिल जाय तो आयुका घात हो जाय यह निश्चय है। बहुरि आयुकर्मकी ज्यों अन्य हू कर्म बहिरंग कारण मिले उदय आवै ही हैं समस्त जीवनिकै पापकर्म पुण्यकर्म सत्तामैं विद्यमान हैं बाह्य द्रव्य क्षेत्रकाल भावादि परिपरिपूर्ण सामग्री मिले कर्म अपना रस देवैही है बाह्य निमित्त नाहीं मिले तो उदयमैं नाहीं आवै तथा रस दिया विनाही विजरै है बहुरि जो असद्भूतकूं प्रगट करना सो दूजा असत्य है जैसैं देवनि कै अकालमृत्यु कहना देवनिकू भोजन ग्रमादिरूप करना कहैं वा देवागनाकै मनुष्यका कामसेवन इत्यादिक कहना दूजा असत्य है। बहुरि वस्तुका स्वरूपकूं अन्य विपरीत स्वरूप कहना सो तीसरा असत्य है। बहुरि गर्हित वचन कहना सो चौथा असत्य वचन है। गर्हित वचन का तीन भेद हैं गर्हित, सावद्य, अप्रिय। तिनमैं पैशून्य, हास्य, कर्कस असमंजस, प्रलपित इत्यादिक अन्य हू सूत्रविरुद्ध वचन है तिनमैं जो परकै विद्यमान तथा अविद्यमान दोषनिकू पीठ पाछैं कहना तथा परका धनका विनाश जीविकाका विनाश प्राणनिका नाश जिस वचनतैं हो जाय तथा जगतमैं निन्द्य हो जाय अपवाद हो जाय ऐसा वचन कहना सो गर्हित नाम असत्य वचन है। बहुरि हास्य लीला भंडवचन तथा श्रवण करनेवालेनिकै अशुभराग उपजानेवाले वचनसो हास्यनामा गर्हित वचन है। बहुरि अन्यकूं कहै तू ढांडा है तू मूर्ख है अज्ञानी है इत्यादिक कर्कश वचन है।

बहुरि प्रयोजन रहित धीठपनातै बकवाद करनासो प्रलपित वचन है। बहुरि जिस वचनकरि प्राणानिका घात हो जाय ग्राममैं उपद्रव हो जाय देश लुटि जाय तथा देशके स्वामीनिकै मदनैर होजाय तथा ग्राममैं अग्निलगि जाय घरजल जाय वनमैंअग्नि लगि जाय तथा कलह विसंवाद युद्ध प्रगट हो जाय तथा विषाद करि मरिजाय तथा मारिजाय तथा वैर बन्ध जाय तथा छहकायके जीवनिके घातका प्रारम्भ हो जाय महाहिंसामैं प्रवृत्ति हो जाय सो सावद्य वचन है तथा परकू चार कहना व्यभिचारी कहना सो समस्त सावद्य वचन दुर्गतिके कारण त्यागने योग्य है अर अप्रिय वचन त्यागने योग्य प्राण जाते हू नाही कहना अप्रीय वचनके भेद ऐसे जानने—कर्कसा, कटुका, परुषा, निष्ठुरा परकोपनी, मध्यकृषा, अभिमानी, अनयङ्करी, छेदकरी, भूतवधकरी ये महापापके करनेवाली महानिन्द्य दश भाषा मत्यवादी त्याग करै हैं। तू मूर्ख है बलद है ढार है रे मूर्ख तू कहा समझे इत्यादिक कर्कसा भाषा है बहुरि तू कुजाति है नीच जाति है अधर्मी महा पापी है तू स्पर्शन करने योग्य नाहीं तेरा मुख देख्या बड़ा अनय इत्यादिक मर्म उद्वेग करनेवाला कटुका भाषा है तू आचारभ्रष्ट है भ्रष्टाचारी है महा दुष्ट है इत्यादिक मर्म छेदनेवाली परुषा-भाषा है ताकू मारनाखस्यू थारैं दाह लगास्यू थारो मस्तक काटिस्यू तने खाय जास्यू इत्यादिक निष्ठुरा भाषा हैं। रे निर्लज्ज वर्णशंकर तेरो जातिकुल आचारका नाहीं तेरो कहा तप त कुशील है हसने योग्य है महानिन्द्य है अभक्ष्य भक्षण करनेवाला

है तरा नाम लिया कुल लज्जित होय है इत्यादिक परकोपीनो भाषा है। बहुरि जिस वचनके सुनते ही हाडनिकी शक्ति नष्ट हो जाय सो मध्यकृशा भाषा है। बहुरि लोकनिमैं अपना अपना अपनागुण प्रकट करना परके दोष कहना अपना कुल जाति रूप तप विज्ञानादिक मद लिये जो वचन बोलना सो अभिमानी भाषा है। बहुरि शीलखण्डन करनेवाली अर विद्वेष करनेवाली अनय करि भाषा है। बहुरि जो वीर्य शील गुणादिकनिके निर्मूल करने वाली असत्यदोष प्रगट करनेवाली जगतमैं झूठा कलंक प्रगट करनेवाला छेदकरि भाषा है। जिस वचनकरि अशुभ वेदनाप्रगट होी जाय वा प्राणनिका नाश करनेवाली भूतवधकरि भाषा है। ए दश प्रकार निंद्य वचन त्यागने योग्य है। बहुरि स्त्रीनिके हाव भाव विलास विभ्रमरूप क्रीडा व्यभिचारादिकनिकी कथा कामके जगाने वाली ब्रह्मचर्यका नाश करनेवाली स्त्रीनिकी कथा तथा भोजनपानमें राग करावनेवाली भोजनकी कथा तथा रौद्रकर्म करनवाली राजकथा तथा मिथ्यादृष्टी कुलिंगीनिकी कथा तथा धन उपार्जन करनेकी कथा तथा वैरीदुष्टनिके तिरस्कार करनेकी कथा तथा हिंसाकू पुष्ट करनेवाली वेद स्मृति पुराणादिक कुशास्त्रनिकी कथा कहने योग्य नाहीं श्रवण करने योग्य नाहीं पापका आश्रवका कारण अप्रिय भाषा त्यागने योग्य है। भो ज्ञानीहो! येचार प्रकारकी निन्द्यभाषा हास्यकरि क्रोधकरि लोभकरि मदकरि भयकरि द्वेषकरि कदाचित मति कहो अपना परका हितरूप होय वचन बोलो। इस जीवके जैसा सुख हितरूप अर्थ संयुक्त मिष्ट वचन करे

स्त्रै निराकुल करे है आताप हरै तैसा सुखकारी आताप हरनेवाली चन्द्रकान्तिमणि जल चन्दन मुक्तामालादिक कोऊ पदार्थ नाही है अर जहां अपने बोलनेतैं धर्मकी रक्षा होती होय प्राणीनिका उपकार होता होय तहां विना पूछै हू बोलना अर जहां आपका अन्य का हित नाही होय तहां मौन सहित ही रहनाउचित है। वहुरि सत्य वचनतैं सकलविद्या सिद्ध होय है जहां विद्या देनेवाला सत्य वादी होय और सीखनेवाला हू सत्यवादी होय ताके सकल विद्या सिद्ध होय कर्मकी निर्जरा होय सत्यका प्रभावसे अग्निजल, विष सिंह, सर्प दुष्ट देव मनुष्यादिक बाधा नाहीं कर सके है। सत्य का प्रभावतें देवता वशीभूत होय है प्रीति प्रतीत दृढ होय है सत्यवती मातासमान विश्वास करने योग्य होय हैं गुरुकी ज्यों पूज्य होय हैं मित्रज्यों प्रिय होय है उज्वल यशकू प्राप्त होय है तपसंयमादि समस्त सत्यवचनतैं सोहै हैं। जैसे विष मिलनेकरि मिष्ट भोजनका नाश होय अन्यायकरि धर्मका यशका नाश होय तैसैं असत्यवचनतें अहिंसादि सकलगुणनिका नाश होय है तथा असत्य वचनतैं अप्रतीति अकीर्ति अपवाद, अपने वा अन्यके संक्लेश, अरति कलह वैर, शोक, वध, बन्धन, मरण, जिह्वाछेद, सर्वस्वहरण, बंदी गृहमें प्रवेश, दुर्ध्यान, अपमृत्यु, व्रत, तप, शील संयमका नाश, नरकादि दुर्गतिमें गमन, भगवानकी आज्ञाको भंग परमागमतैं पराङ्मुखता घोरपापका आस्रव इत्यादि हजारां दोष प्रगट होय हैं। यातैं भोज्ञानीजन हो लोकमैं प्रिय हित मधुर वचन बहुत भला है सुन्दर शब्दनिकी कमी नाही फिर निन्द्यवचन

को अतिलम्पटता ही परिणामकूं मलीन करनेवाली है। इनकी वाछातैं रहित होय अपने आत्माकूं समापवतनतैं रक्षा करो। आत्माकी मलीनता तो जीवहिंसातैं अर परधन परस्त्रीकी वाछातैं है जे परस्त्री परधनका इच्छुक अर जीवघातके करनेवाले हैं ते कोटितीर्थनिमैं स्नान करो समस्त तीर्थनिकी समस्त वदना करो तथा कोटि दान करो कोटिवर्ष तप करो समस्त शास्त्रनिका पठन करो तो हू उनके शुद्धता कदाचित नाहीं होय। अभक्ष्य भक्षण करनेवालेनिका अर अन्यायका विषय तथा धनकूं भोगवालेनिका परिणाम एसे मलीन होय है जो कोटिवार धनका उपदश अर समस्त सिद्धान्तनिकी शिक्षा बहुत वर्ष श्रवण करते हूँ कदाचित हृदयमैं प्रवेश नाहीं करे है सो देखिये है जिनहू पचास शास्त्र श्रवण करते भये हैं तो हू धर्म का स्वरूपका ज्ञान जिनकूं नाहीं है सो समस्त अन्याय धन अर अभक्ष्य भक्षणका फल है तातैं जो अपने आत्माका शौच चाहो हो तो अन्यायका धन मति ग्रहण करो अर अभक्ष्य भक्षण मति करो परकी स्त्रीकी अभिलाषा मति करो। बहुरि परमात्माके ध्यानतैं शौच है अहिंसा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य और परिग्रहत्यागतैं शौचधर्म है। जे पचपापनिमैं प्रवर्तनेवाले हैं ते सदाकाल मलीन हैं जे परके उपकारकू लोपे हैं ते कृतघ्नी सदा मलीन हैं जे गुरुद्रोही धर्मद्रोही मित्रद्रोही उपकारकू लोपनेवाले

है तिनके पापका संतान असंख्यात भवनिमें कोटि तीर्थनिमें स्नान करि दानकरि दूर नाही होय है विश्वासघाती सदामलीन है यातैं भगवानके परमागमकी आज्ञा प्रमाण शुद्ध सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकरि आत्माकूं शुचि करो क्रोधादि कषायका निग्रहकरि उत्तम क्षमादिगुण धारणकरि उज्वल करो समस्त व्यवहार कपटरहित उज्वल करो परका विभव ऐश्वर्य उज्वलयश उत्तमविद्यादिक प्रभाव देखि अदेखसका भावरूप मलीनता छांडि शौचधर्म अङ्गीकार करो परका पुण्यका उदय देखि विषादी मति होहुँ इस मनुष्यपर्यायकूं तथा इन्द्रिय ज्ञान बल आयु संपदादिकनकूं अनित्य क्षणभंगुर जानि एकाग्र चित्तकरि अपने स्वरूपमें दृष्टि धारि अशुभ भावनिको अभावकरि आत्माकूं शुचि करो। शौच ही मोक्षका मार्ग है शौच ही मोक्षका दाता है। ऐसें शौच नाम पंचधर्मको वर्णन कियो ॥ ५ ॥

अब संयम नाम धर्मका स्वरूप कहिये है—संयमका ऐसा लक्षण जानना जो अहिंसा कहिये हिंसाको त्याग दयारूप रहेगा हितमित पथ्य प्रिय सत्यवचन बोलना परके धनमें वाछा का अभाव करना कुशीलका छांडना परिग्रह त्यागना ए पांच व्रत हैं तिनमें पंच पापनिका एक देश त्याग सो अणुव्रत है सकलत्याग सो महाव्रत है इन पंचव्रतनिकूं दृढ

धारण करना अर पच समितिका पालना -तिनमें गमनकी शुद्धता ईर्यासमिति है-वचनकी शुद्धता, सो भाषासमिति है निर्दोष शुद्ध भोजन करना सो एषणासमिति है, शरीरके उपकरणादिक नेत्रनिते सोधि उठावना धरना, सो आदाननिक्षेपण समिति है मलमूत्रकफादिक मलनिकू अन्य जीवनके ग्लानि दु ख बाधादिक नाहि उपजै ऐसे क्षेत्रम क्षेपण सो प्रतिष्ठापना समिति है इन पचम समितिनिका पालना अर क्रोध, मान, माया, लोभ, इन च्यार कषायनिका निग्रह करना अर मनवचनकायकी अशुभप्रवृत्ति ए दण्ड हैं इनतीन दण्डनिका त्याग अर विषयनिमें दौडती पचइन्द्रियनिकू वश करना जीतना से सयम है।

भावार्थ—पचव्रतनिका कारण पच समितिका पालन कषायनिका निग्रह दण्डनिका त्याग इन्द्रियनिका विजयकू जिनेन्द्रके परमागममें सयम कह्या है। सो सयम बहुत दुर्लभ है जिनके पूर्वके बाधे अशुभकर्मनिका अतिमन्दपना होते मनुष्य जन्म उत्तमदेश, उत्तमकुल, उत्तमजाति, इन्द्रियपरिपूर्णता नीरोगता कषायनिकी मन्दता होय अर उत्तमसगति अर जिनेन्द्रका आगमतैं अतिविरक्तताके धारण मनुष्यके अप्रत्याख्यानावरणकी क्षयोपशमतैं तो देशसयम होय अर जाकू अप्रत्याख्यान अर प्रत्या-

ध्यान, दोऊ कषायनिका क्षयोपशम होय ताके सकल संयम पावना महादुर्लभ है। नरगतिमें तिर्यंच गतिमें देवगतिमें तो संयम होय नाहीं कोऊ तिर्यंचके देशव्रत अपनी पर्यायमाफिक कदाचित होय है अर मनुष्यपर्यायमें भी नीचकुलादिकमें, अधर्मदेशनिमें इन्द्रियविकल अज्ञानी रोगी दरिद्री अन्यधर्ममार्गी, विषयानुरागी तीव्रकषायी निन्द्यकर्मी मिथ्यादृष्टीनिकै संयम कदाचित नाहीं होय है तातैं अतिदुर्लभ संयमका पावना है ऐसे दुर्लभ संयमकू पाय कोऊ मूढबुद्धि विषयनिका लोलुपी होय छाडे है तो अनन्तकाल जन्म मरण करता संसारमें परिभ्रमण करे है। संयम पाय छाडै संयमकू बिगडे है ताते अनन्तकाल निगोदमें परिभ्र-मण त्रसस्थावरनिमें भ्रमण करना होय सुगति नाहीं होय [illegible] पाय बिगाडने समान अन्य अनर्थ नाहीं है विषय[illegible] होय जो संयमकू बिगाडे है सो एक कौडीमें [illegible] है तथा इन्धनके अर्थि कल्पवृक्षकू छेदे है [illegible] सुख नाहीं सुखाभास है क्षणभंगुर है, नर[illegible] कारण है किंपाकफल जैसे जिह्वाका [illegible] घोर दुःख महादाह सन्ताप देय [illegible] किंचिमात्र काल तो, अज्ञानी [illegible] फिर अनन्तकाल, अनन्तभवनिमें [illegible]

की परमरक्षा करी पांच इन्द्रियकू विषयनिके सम्बन्धतैं रोकनेतैं सयम होय है कषायनिका खण्डनकरि सयम होय है दुद्धरतपका धारणकरि सयम होय है रसनिका त्यागकरि सयम है मनके भ्रमरके रोकनेकरि सयम होय है महान कायक्लेशनिके कहने करि सयम होय है त्रसस्थावर है। उपवासादिक अनशनतपकरि सयम होय है मनमें परिग्रहको लालसाका त्यागकरि सयम होय है त्रसथावर रक्षा करना सो ही सयम है मनके विकल्पनिके रोकनेकरि तथा प्रमादतें वचनको प्रवृत्तिके रोकनेकरि, सयम होय है शरीरके अगउपागनिका प्रवर्तनकू रोकमकरि सयम होय है। बहुत गमनके रोकनेकरि सयम होय है। बहुरि दयारूप परिणाम करि सयम होय है परमार्थका विचार करके तथा परमात्माका ध्यान करके सयम होय है जहा परिग्रहमे मता मनष्ट होय वाछारहित तिष्ठना तथाप्रचड कामिना खण्डन करना सो बडा तप है। जहा नग्न दिगम्बर रूप धारि शीतकी पवनका आतापका वर्षाकी तथा डास माछर मक्षिका मधुमक्षिका सप बिच्छू इत्यादिकर्तें उपजो घोर वेदना कू कोरे अगपरि सहनासो तप है अर जो निर्जनपर्वतनिकी निर्जनगुफानिमे भयकर पर्वतनिके दराडेनिम तथा सिंहव्याघ्र रीछ स्याली चीता हस्तीनिकरि व्याप्त घोरवनमैं निवास

करना सो तप है। तथा दुष्ट वैरी म्लेछ चोर शिकारी मनुष्य और दुष्टव्यंतरादिक देवनिकृतघोर उपसर्गनितैं कपायमान नाहीं होना धीर वीर पनात कायरता छाडि वैरविरोध छाडि समभावतैं परमात्माका ध्यानमें लीन हुआ सहना सो तप है। बहुरि समस्त जीवनिकू उलझानेवाले रागद्वेषनिकू जीतना नष्ट करना सो तप है। बहुरि यो याचनारहित भिक्षाके अव-सरमें श्रावकका घरमें नवधाभक्ति करि हस्तमें धर्या खारा आलूणा कडवा खाटा लूखा चीकना रस नीरस तिममें लोलु-पता और सक्लेशरहित निर्दोष प्रासुक आहार एक वार भक्षण करना सो तप हैं। बहुरि जो पचसमितिका पालना अर मन वचनकायकू चलायमान नाहीं करना अपना रागद्वेषरहित आत्मानुभव करनासो तप है। जो स्वपर तत्वकी कथनीका निर्णय करना च्यार अनुयोगका अभ्यासकरि धर्म सहित काल व्यतीत करना सो तप है। बहुरि अभिमान छाडि विनयरूप प्रवर्तना कपट छाडि सरल परिणाम धारना क्रोध छाडि क्षमा ग्रहण करना लोभत्याग निर्वांछक होना सो तप है। जाकरि कर्मका समूहका नाशकरि आत्मा स्वाधीन हो जाय सो तप है। जो श्रुतका अर्थका प्रकाश करना व्याख्यान करना आप निरन्तर अभ्यास करै अन्यकू अभ्यास करावै सो तप है। तपस्वीनिका देवनिका इन्द्र स्तवन करै भक्तिका प्रकाश करै तपकरि केवलज्ञान उत्पन्न होय है तपका अचिंत्य प्रभाव है तपके माहि परिणाम होना अतिदुर्लभ है। नरक

मैं तपकी योग्यता ही दाहीं एक मनुष्यगतिमें होय मनुष्यमें हू उत्तम कुल जाति बल बुद्धि इन्द्रियनिकी पूर्णता जाकै होय तथा रागादिकनिकी मन्दता जाकै होय तथा विषयनिकी लालसा जाकै नष्ट भई ताकै होय है अर तप द्वादशप्रकार है जाकी जैसी शक्ति होय तिस प्रमाण धारण करौ। बालक करो वृद्ध करो धनाढ्य करो निधन करो बलवान करो निर्बल करो सहाय सहितहोय सो करो सहायरहित होय सो करो भगवान को प्ररूप्यो तप किसीके हू करनेकू अशक्य नाहीं है। जैसे वायुपित्तकफादिकनिका प्रकोप नाहीं होय रोगकी वृद्धि नाहीं होय जैसें शरीर रत्नत्रयका सहकारी बन्या रहै तैसें अपना संहनन बल वीर्य देखि तप करो। तथा देशकाल आहारकी योग्यता देखि तप करो। जैसें तपमें उत्साह बधतो रहै परिणामनिमें उज्वलता बधती जाय तैसें तप करो तथा जो इच्छा का निरोध करि विषयनिमें राग घटावना सो तप है। तप ही जीवका कल्याण है तप ही जीवका कल्याण है तपही कामकू निद्राकू प्रमादकू नष्ट करनेवाला है यातै मदछाडि बारहप्रकार तपमें जैसा जैसा करनेकू सामर्थ्य होय तैसा ही तप करौ सो बारह प्रकार तपकू आगैं न्यारो लिखेंगे। ऐसैं तप धर्मका वर्णन किया ॥ ७ ॥

अब त्याग धर्मका वर्णन करै हैं। त्याग ऐसैं जानना जो धन संपदादि परिग्रहकू कर्मका उदयजनित पराधीन अर अविनाशीक अर अभिमानको उपजावनेवाली तृष्णाकू बधावनेवाला

रागद्वेषकी तीव्रता करनेवाला आरम्भकी तीव्रता करनेवाला हिंसादिक पचपापनिका मूल जानि उत्तम पुरुष यकू अंगीकार ही नाही किया ते धन्य हैं। कोई याकू अङ्गीकार करि याकू हलाहल विष समान जानि जीर्णतृणको ज्यों त्याग किया तिनकी अचिन्त्यमहिमा है। अर कोई जीवनिके तीव्र रागमात्र मन्द हुआ नाहीं यातैं सकल त्यागनेकू समर्थदानमैं लगावै हैं अर जे धर्मके सेवन करनेवाले निर्धनजन हैं तिनके अन्न वस्त्रादिक करि उपकार करनेमैं धन लगावै हैं तथा धर्मके आयतन जिनमन्दिरादिकमैं जिनसिद्धान्त लिखाय देनेमैं तथा उपकरण पूजनादिक प्रभावमैं लगावै हैं तथा दुखित दरिद्री रोगिनीके उपकारमें तन मन धन करुणावान होय लगावै हैं ते धन जीतव्यकू सफल करैं हैं। दान है सो धर्मका अङ्ग है यातैं अपनी शक्ति प्रमाण भक्ति करि गुणनिके धारक उज्वल पात्रनिकी दान देना है सो परलोककू जीवने महान सुख सामग्रीकू लेजावै है सो निर्विघ्न स्वर्गकू तथा भोगभूमिकू प्राप्त करनवाला जानो। दानकी महिमा तो अज्ञानी बालगोपाल हू कहै हैं जो पूर्वे दान दिया है सो नाना प्रकार सुख सामग्री पाई है अर देगा सो पावैगा तातैं जो सुख सपदाका अर्थी होय सो दानहीमैं अनुराग करो। जे दान करनेमें उद्यमी हैं ते इहा हू तीव्र आर्तपरिणामतैं मरि सर्पादिक दुष्ट तिर्यंचगति पाय नरक निगोदकू जाय प्राप्त होय हैं। धन कहा साथ जायगा धन पावना तो दानीहीतैं सफल है दान-

रहितका धन घोर दुःखिनिकी परिपाटीका कारण है अर इहां हू कृपण घोर निन्दाकू पावै हैं कृपणका नाम भी लोक नाहीं कहै हैं कृपण समका लोक अमगल मानै हैं जामैं औगुण दोष हू होय तो दानीका दोष ढकि जाय है। दानीका दोष दूरि भागै है नानकरिही निर्मलकीर्ति जगतमे विख्यात होय है। देनेकरि वैरी हू चरननिम नमै है दान देनेतैं वैरा वैर छाडै है अपना हित करनेवाला मित्र हो जाय हैं जगतमें दान बडा है थोडासा दान है सत्यार्थ भक्तिकरि करनेवाला भोगभूमिका तीनपल्यपर्यंतभोगभोगिदेवलोकमेंजायहैदनाहीजगतमेंऊँचाहैदान देना विनयसयुक्तस्नेहक्रा वचनकरिहसत होय देना अर दानी हैं ते ऐसा अभिमान नाही करै हैं जो हम इसका उपकार करै हैं। दानीतो पात्रकू अपना महाउपकार करनेवाला मानै हैं जो लोक रूप अन्धकूपमे पडनेका उपकार पात्र विना कौन करै पात्रविना लोभीनिका लोभ नाहीं छूटता अर पात्रविना ससार के उद्धार करनेवाला दान कैसे रहता। यातैं धर्मात्मा जननिके तो पात्रके मिलने समान अर दानके देने समान अन्य कोऊ आनन्द नाही है बडापना धनाढ्यपना ज्ञानीपना पाया है तो दानमें ही उद्यम करो। छह कायके जीवनिकू अभयदान देह अभक्ष्यका त्यागकरि बहआरम्भके घटावनेकरि देखि सोधिके लना धरना यत्नाचार विना निर्दयी होय नाही प्रवर्तनाकिमी प्राणीमात्रकू मनवचनकायतैं दुःखित मतिकरा। दुःखीनिकाकरुणा

ही करो यो ही गृहस्थके अभयदान है यातैं संसारमें जन्म मरण रोग शोक दारिद्र वियोगादिक संतपका पात्र नहीं होओगे।

बहुरि संसारके बधावनेवाले हिंसाकू पुष्ट करनेवाले तथा मिथ्याधर्मकी प्ररूपणा करनेवाले तथा युद्धशास्त्र शृङ्गारशास्त्र मायाचारके शास्त्र वैद्यकशास्त्र रस रसायण मन्त्र जन्त्र मारण वशीकरणादिक शास्त्र महापापके प्ररूपक हैं इनकू अति दूरतैं ही त्यागि भगवान वीतराग सर्वज्ञका कह्या दया धर्मकू प्ररूपणा करनेवाला स्याद्वादरूप अनेकान्तका प्रकाश करनेवाले नय प्रमाणकरि तत्त्वार्थकी प्ररूपणा करनेवाले शास्त्रनिकू अपने आत्माकू पढने पढावने करि आत्माका उद्धारके अर्थि अपने अर्थि दान करो। अपनी सन्तानकू ज्ञानदान करो तथा अन्य धर्म बुद्धि धर्मके रोचक इच्छक तिनकू शास्त्रदान करो ज्ञानके इच्छक है ते ज्ञानके अर्थि पाठशाला स्थापना करै हैं जातैं धर्म का स्तम्भ ज्ञान ही है। जहां ज्ञान दान होयगा तहां धर्म रहैगा यातैं ज्ञानदानमें प्रवर्तन करो। ज्ञानदानके प्रभावतैं निर्मल केवलज्ञानकू पावै है। बहुरि रोगका नाश करनेवाला प्रासुक औषधिका दान करो औषधदान बडा उपकारक है अर रोगी कू सीधो तयार औषध मिलै है ताका बडा आनन्द है अर निरधन होय तथा जाकै टहल करनवाला नाहीं होय ताकू औषध जो करी हुई तय्यार मिल जाय तो निर्धनिका लाभ समान मानै है औषध लेय नीरोग होय है समस्त व्रत तप संयम पालै है ज्ञानका अभ्यास करै है औषधदान है

ताकै वात्सल्य गुणस्थितिकरणगुण निर्विचिकित्सा गुणै इत्यादिक अनेक गुण प्रगट होय हैं औषधदानके प्रभावतैं रोगरहित देवनिका वैक्रयिक देह पावै है। बहुरि आहारदान समस्त दाननिमें प्रधान है प्राणी का जीवन शक्ति बल बुद्धि ये समस्त गुण आहार बिना नष्ट होय जाय हैं आहार दिया सो प्राणीकूं जीवन बुद्धि शक्ति समस्त दीना। आहारदानतैं ही मुनि श्रावकका सकल धर्म प्रवर्तै है आहार बिना मार्ग भ्रष्ट हो जाय आहार है सो समस्त रोग का नाश करनेवाला है जो आहारदान दे है सो मिथ्यादृष्टि हू भोगभूमिमे कल्पवृक्षनिका दशांग भोगकूं असंख्यातकाल भोगि अर क्षुधातृषादिककी बाधारहित हुआ आंवला प्रमाण तीन दीनके आतरै भोजन करै। समस्त दुःखक्लेश रहित असंख्यात वर्ष सुखभोगी देवलोकनिमे जाय उपजै है तातैं धनकूं पाय च्यार प्रकारके दान दनमें प्रवर्तन करो। अर जो निर्धन है सो हू अपना भोजनमतै जेता बनै तेता दान करो आपकूं आधा भोजन मिलतो मैं तैं हू ग्रास दोय ग्रास दुःखित व क्षुधित दीन दरिद्रीनिकं अवश्य देवा। बहुरि मिष्टवचन बोलने का बडा दान है आदर सत्कार विनय करना स्थान देना कुशल पूछना ये महादान हैं। बहुरि दुष्टविकल्पनिका त्याग करो पापनिमें प्रवृत्तिका त्याग करो च्यार कषायनिका त्याग करो विकथा करनेका त्याग करो परके दोष सत्य असत्य कदाचित् मति कहो। बहुरि अन्यायका धन ग्रहण करनेका दूरहितैं त्याग करो सो

ज्ञानीजन हो जो अपना हितके इच्छक हो तो दुखित जननिकूं तो दान करो अर सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञानादि गुणनिके धारकनिका महाविनय सन्मान करो समस्त जीवनिमें करुणा करो मिथ्यादर्शनका त्याग करो रागद्वेष मोहके धारक कुदेव अर आरम्भ परिग्रहके धारक भेषधारी अर हिंसाके पोषक रागद्वेषकूं पुष्ट करनेवाले मिथ्यादृष्टिनिके शास्त्र इनकूं वन्दना स्तवन प्रशंसा करनेका त्याग करो क्रोध मान माया लोभ इनके निग्रह करनेमें बडा उद्यम करो क्लेश करनेके कारण अप्रिय वचन गालीके वचन अपमानके वचन मदसहित वचन कदाचित मति कहो इत्यादिक जो परके दुःखके कारण तथा अपना यशकूं नष्ट करनेवाला धर्मकूं नष्ट करनेवाला मन, वचन कायके प्रवर्तनका त्याग करो ऐसे त्याग धर्मका संक्षेप वर्णन किया ॥ ८ ॥

अब आकिंचन्य धर्मका स्वरूप कहिये है—जो अपना ज्ञानदर्शनमय स्वरूपविना अन्य किंचितमात्र हू हमारा नाहीं है मैं किसी अन्य द्रव्यका नाहीं हूँ मेरा कोऊ अन्य द्रव्य नाहीं है ऐसा अनुभवनिकूं आकिंचिन्य कहिये है। भो आत्मान् अपना आत्मकूं देहतें भिन्न अर ज्ञानानन्द सुखकरि पूर्ण परम अतीन्द्रिय भय रहित ऐसा अनुभव करो। भावार्थ—ये देह है सो मैं नाहीं देह तो रस रुधिर हाड मांस चामरमय जड अचेतन है। मैं इस देहतें अत्यन्त भिन्न हूं ये ब्राह्मण क्षत्रियादिक जातिकुल ... है मेरे ये नाहीं है स्त्री पुरुष नपुंसक

देहके हैं मेरे नाहीं यो गोरापना, मावलापन, राजापना, रंकपना, स्वामीपना, सेवकपना, पण्डितपाना, मूर्खपना इत्यादि समस्त रचना कर्मका उदय जनित देहके हैं मैं तो ज्ञायक हूँ ये देहका सम्बन्धी मेरा स्वरूप नाही है मेरा स्वरूप अन्य द्रव्यका उप मारहित है ताता ठण्डा कठोर लूखा चीकना हलका भारी अष्ट प्रकार स्पर्श है त हमारा रूप नाहीं पुद्गलके रूप हैं ये खाटा मीठा कडवा कसायला चिरपरा पंच प्रकार रस अर सुगन्ध दुर्गंध दोय प्रकारका गंध अर काला पीला हर्या स्वेत रक्त ये पंचवर्ण मेरा स्वरूप नाही पुद्गलका हैं मेरा स्वभाव तो सुख करि परिपूर्ण है परन्तु कर्मके आधीन दुखकरि व्याप्त होय रह्या हूँ मेरा स्वरूप इन्द्रिय रहित अतीन्द्रिय है इन्द्रिया पुद्गलमय कर्म रहित की हुई है मैं समस्त भय रहित अविनाशी अखण्ड आदि अन्तरहित शुद्ध ज्ञान स्वभाव हू परन्तु अनादिकालतैं जैसे सुवर्ण अर पाषाण मिल रह्या है तैसे तथा क्षीरनीर ज्यों कर्मनि करि अनादि कालतैं मिल रह्या हू तिनमैं हू मिथ्यात्वनाम कर्मका उदयकरि अपना स्वरूपका ज्ञानरहित होय देहादिक परद्रव्य निकू आपका स्वरूप जानि अनंतकाल मैं परिभ्रमण करया अब काऊ किंचित आवरणादिकके दूर होनेतैं श्रीगुरुनिका उपदेश्या परमागमके प्रसादतैं अपना अर परका स्वरूपका ज्ञान भया है जैसे रत्ननिका व्यवहारी जडे हुए पंचवर्ण रत्ननिके आभरण निमैं गुरुकी कृपातैं अर निरन्तर अभ्यासतैं मिल्या हुवा हू डाकका रंग अर माणिक्यका रंगकू अर लालकू अर मोलकू

भिन्न भिन्न जानै है तैसे परमागमका निरन्तर अभ्यासतै मेरा ज्ञान स्वभावमैं मिल्या हुआ राग द्वेष मोह कामादिक मैलकू भिन्न जाण्या है अर मेरा ज्ञायक स्वभावकू भिन्न जाण्या है तातैं अब जैसे रागद्वेष मोहादिक भाव कर्मनिमे अर कर्मनिके उदयतैं उपज विनाशीक शरीर परवार धन सम्पदादि परिग्रहमें ममता बुद्धि मेरे जैसे फिर अन्य जन्ममें हू नाहीं उपजे तैसे आकिंचन्य भाऊ वा आकिंचन्य भावना अनादिकालतैं नाही उपजी समस्तपर्यायनिकू अपना रूप मान्या यथा रागद्वेष-मोहक्रोधकामादिकभाव कर्मकृत विकार थे तिनकू आपरूप अनुभवकरि विपरीत भावनितैं घोरकर्मबंधकू किया अब मैं आकिंचन्य भावनामे विघ्नका नाश करनेवाला पच परमगुरुनिका शरणतैं आकिंचन्य ही निर्विघ्न चाहू हू और त्रैलोक्यमे कोऊ अन्य वस्तुकू नाहीं चाहू हू । यो अकिंचन्यपणा ही ससार समुद्रतैं तारणेकू जहाज होहू जो परिग्रहकू महाबंध जानि छाडना सो आकिंचन्य है आकिंचन्यपणा जाके होय है ताके परिग्रहमे बांधा रहै नाही है आत्मध्यानमे लीनता होय है देहादिकनिमैं बाह्यभेषमैं आपो नाहीं रहे है अर अपना स्वरूप जो रत्नत्रय तामैं प्रवर्त्ति होय है इंद्रियनिके विषयमैं दौडता मन रुकि जाय है देहतैं स्नेह छूटि जाय है संसारिकदेवनिका सुख इन्द्र अहमिन्द्र चक्रवर्तीनिका सुख दुःख दीखै है। इनमे वाछा कैसैं करैं परिग्रह रत्न सुवर्ण राज्य ऐश्वर्य स्त्री पुत्रादिनिकू जीर्णतृणमें जैसे ममतारहित छांडनेमें विचार नाहीं तैसैं परि-

गह लाडै है। आकिंचन्य तो परम वीतरागपणा है। जिनके ससारको अन्त आगयो तिनके होय है जाके आकिंचन्यपणा होय ताम परमार्थ जो शुद्धआत्मा ताका विचारनेकी शक्ति प्रगट होक ही अर पंचपरमेष्ठीम भक्ति होय ही अर दुष्टविकल्पनिका नाश होय ही और इष्ट अनिष्ट भोजनमें रागद्वेष नष्ट हो जाय है केवल उदररूप खाडा भरना अन्य रस नीरस भोजनमें विचार जाता रहे है समस्त धर्मनिमें प्रधान धर्म आकिंचन्य है। मोक्षका निकट समागम करावनेवाला है अनादिकालतैं जेते सिद्ध भये हैं ते आकिंचन्यतैं ही भये है अर आगैं जो जो तीर्थंकरादि सिद्ध होयेंगे ते आकिंचन्यपणा हीतैं होयेंगे। यद्यपि आकिंचन्यधर्म प्रधानकरि साधुजननिकै ही होय है तथापि एक देश धर्मका धारक गृहस्थ उस धर्मके ग्रहण करने की इच्छा करै है अर गृहस्थावस्थामें मदरागी होय अतिविरक्त होय है प्रमाणिकपरिग्रह धारै है आगामी वांछारहित है अन्यायका धन परिग्रह कदाचित् ग्रहण नाहीं करै है अल्पपरिग्रहमें अतिसंतापी होय रहे है परिग्रहकूं दुःखका देनेवाला और अत्यन्त अस्थिर मानै है ताकै ही आकिंचन्य भावना होय है। ऐसे आकिंचन्य धर्मका वर्णन किया है ॥९॥

अब उत्तमब्रह्मचर्यका स्वरूप कहिये है—समस्त विषयनिमें अनुराग छोड करके ब्रह्म जो ज्ञायकस्वभाव आत्माका ता मैं जो चर्या कहिये प्रवृत्ति सो ब्रह्मचर्य है। भो ज्ञानीजन हो यो ब्रह्मचर्य नाम व्रत बडो दुर्द्धर है इरेक वापडा विषयनि

केवल हुआ आत्मज्ञान रहित हैं ते याकू धारनकू समर्थ नाहीं हैं जे मनुष्यनिमैं देवके समान है ते धारवेकू समर्थ हैं अन्य रक विषयनिकी लालसाके धारक ब्रह्मचर्य धारनेकू समर्थ नाहीं हैं। यो ब्रह्मचर्यव्रत महादुर्द्धर है जाके ब्रह्मचर्य होय ताके समस्त इन्द्रिय अर कषायनिका जीतना सुलभ है। भो भव्य हो! स्त्रीनिका सुखमें रागी जो मन रूप मदोन्त हस्ती ताकू वैराग्यभावनामैं रोक करके अर विषयाका आशा का अभाव करकैं दुर्द्धर ब्रह्मचर्य धारण करो। यो काम सो चित्तरूपभूमिमैं उपजै है याकी पीडाकरि नाहीं करने योग्य ऐसे पाप करै है यातैं यो काम मनकू मथन करै है मनका ज्ञानकू नष्ट करै है याहीतैं याकू मनमथ कहिये है ज्ञान नष्ट हो जाय तदि ही स्त्रीनिका महादुर्गंध निन्द्यशरीरकू रागा हुया सेवै है अर कामकरि अंध हो जाय तदि महाअनीतिकू प्राप्त होय अपनी परकी नारिका विचार ही नाहीं करै है। जो इस अन्यायतैंमैं इहा ही मार्‌या जाऊंगा राजाका तीव्रदण्ड होयगा यश मलीन होयगा धर्म नष्ट हो जाऊंगा सत्यार्थबुद्धि नष्ट हो जायगो। मरणकरि नरकनिके घोरदुःख असंख्यातकाल पर्यंत भोगी फिर असंख्यात तिर्यंचनिके दुःखरूप अनेकभव पाय कुमानुषनिमैं अंधा लूला कूबडा दरिद्री इंद्रियविकल बहरा गूंगा चण्डाल भील चमारनिके नीचकुलनिमैं उपजी फिर अस्थावरनिमैं अनन्तकाल परिभ्रमण करूंगा। ऐसा सत्यविचार कामीके नाहीं उपजै है।। इस कामके नाम हो जगतके

जीवनिकू प्रगट करे है। क कहिये खोटा दर्प अघात गर्व उपजावै ताते कदर्प कहिये है। अति कामना जो वांछा उपजाय दुखित करे ताते याकू काम कहिये है। याकरि अनेक तिर्यचनिके तथा मनुष्यनिकू भवनिमें लडिलडि मरिये ताते मार कहिये है। सबरको वैरी ताते मवरारि कहिये। ब्रह्म जो तपसयम ताते मुचित कहिये चलायमान करै ताते ब्रह्म कहिये इत्यादिक अनेक दोषनिकू नाम ही कहे है या जानि मनवचन कायत अनुरागकरि ब्रह्मचर्य मत पालो। ब्रह्मचर्यकरि सहित ही ममारक पार जावेंगे ब्रह्मचर्यविना व्रत तप समस्त असार हैं ब्रह्मचर्य विना सकल कायाक्लेश निष्फल हैं याते जो स्पर्शनइन्द्रियका सुख ते विरक्त होय अभ्यन्तर परमात्मा-स्वरूप आत्मा ताकी उज्जलता देखहु जैसे अपना आत्मा काम के रागकरि मलीन नाहा होय तैसे यत्न करो। ब्रह्मचर्यकरि ही दोउ लोक भूषित होय हैं। बहुरि जो शीलकी रक्षा चाहो हो अर उज्जल यश चाहो हो अर धर्म चाहो हो अर अपनी प्रतिष्ठा चाहो हो तो चित्तम परमागमकी शिक्षा इस प्रकार धारण करो। स्त्रीनिकी कथा मति श्रवण करो मति कहो स्त्रीनिका रागरूप कुतूहल चेष्टा मति देखो ये मेला देखना परिणाम बिगाडे है। व्यभिचारी पुरुषनिकी सगतिका करना भांग जरदा मादकवस्तु भक्षण नाही करना नाच रु तथा पुष्प माला अत्तर फुलेलादिक शील भगके कारण दूरतें टालो गीत-नृत्यादि कामोद्दीपनके कारणनिका परिहार करो। रात्रिभक्षण

भ्राताकू मित्रकू स्वामीकू सेवककू इक क्षणमात्रमें मारे है। क्रोधी घोर नरकका पात्र है क्रोधी महाभयकर है समस्त धर्म का नाश करनेवाला है। क्रोधीके सत्यवचन नाहीं होय है अर आपकू अर धर्मकू अर समभावकू दग्ध करनेवाला कुवचनरूप अग्निकू उगले है क्रोधी होय सो धर्मात्मा सयमी शीलवान मुनि अर श्रावकनिकू चोरी अन्यायके झूठे दोष कलक लगाय दूषित करे है। क्रोधके प्रभावत ज्ञान कुज्ञान होय है आचरण विपरीत हो जाय है श्रद्धान भ्रष्ट हो जाय है अन्यायमें प्रवृत्ति हो जाय है नीतिका नाश होय है अति हठी होय विपरीत मार्गका प्रवर्तक होय है धर्म अधर्म उपकार उपकारका विचार रहित कृतघ्नी होय है यातैं वीतरागधर्मके अर्थी हो तो क्रोधमानकू कदाचित् प्राप्त मति होहु। बहुरि मार्दव जो कठोरतारहित कोमलपरिणामी जीवमें गुरुनिका बडा अनुराग वर्तै है मार्दवपरिणामीकू साधु माने है तातैं कठोरता रहित पुरुष ही ज्ञानका पात्र होय है। मानरहित कोमल-परिणामीकू जैसा गुण ग्रहण कराया चाहे तथा जैसी कला सिखाया चाहे तैसी कला गुण प्राप्त हो जाय है समस्त धर्म के मूल समस्त विद्याका मूल विनय है विनयवान समस्तके प्रिय होय है अन्यगुण जामें नाही होय सो पुरुष हू विनयतैं मान्य होय है विनय परम आभूषण है कोमल परिणामीमें ही दया बसे है मार्दवतैं स्वर्गलोककी अभ्युदय सम्पदा निर्वाणकी अविनाशिक सम्पदा प्राप्त होय है अर कठोरपरिणामीकू दूर-

होतैं त्याग्या चाहे है जैसे पाषाणमैं जल नाही प्रवेश करे तैसें सद्गुरुनिका उपदेश कठोर पुरुषका हृदयमें प्रवेश नाही करै है जातैं जो पाषाणकाष्टादिक हू नरमाई लिए होय ताकी जो वालवालमात्र हू जहा घड्या चाहै छील्या चाहै तहा, वालमात्र ही उतरि आवे तदि जैसी सूरत। मूरत वनाया चाहैं तैसें ही बनै है अर कोमलरहित मैं जहा टाची लगावें तहा चिडक उतरि दूरि पडे शिल्पीका अभिप्रायमाफिक [illegible] नाही आवें तैसें कठोरपरिणामीकू यथावत् शिक्षा [illegible] अभिमानी कोऊकू प्रिय नाही लागे अभिमानीका [illegible] विना किया वैरी होय है अर परलोकमें अतिनीच [illegible]-ष्यनिमे असख्यातकाल नाना तिरस्कारका पात्र [illegible] है यातैं कठोरता त्यागि मार्दवभावना ही निरन्तर धारण करो।

बहुरि कपट समस्त अनर्थनिका [illegible] है [illegible] अर प्रीतीका नाश करनेवाला है कपटीमैं [illegible] [illegible] निर्दयता विश्वासघातादि समस्त दोष वसैं है [illegible] गुण नाही समस्त दोष ही दोष नास करे है [illegible] यहा अप-यशकू पाय तिर्यंच नरकादिक गतिनिमें [illegible] काल [illegible] करै है मायाचार रहित आर्जवधर्मका [illegible] समस्त गु[illegible] है समस्त लोकनिकू प्रीतका प्रीतीतिका कारण है पर[illegible] देवनिकरि पूज्य इन्द्र सतोन्द्रादिक [illegible] है यातैं सरल [illegible] है ही आत्माका हित है। बहुरि [illegible] समस्तगुण [illegible] सदाकाल कपटादि दोषरहित [illegible] मान्यताकू [illegible]

है अर परलोकमें अनेक देव मनुष्यादिक जाकी आज्ञा समस्त ऊपरि धारै है अर मत्यवादी इहां ही अपवाद निन्दा करने योग्यहोय है। समस्तके अप्रतीतिका कारण है बांधव मित्रादिक हू अवज्ञा करि छाडै हैं राजानिकरि जिव्हाछेद, सर्वस्वहरणादिक दण्ड पावै हैं अर परलोकमैं तिर्यंचगति है- वचन रहित एकेन्द्रिय विकलत्रयादि असंख्यात पर्याय धारै है यातैं सत्य धर्मका धारणा ही श्रेष्ठ है। बहुरि जाका शुचि आचरण होय सो ही जगतमें पूज्य है शुचि नाम पवित्रता उज्ज्वलताका है। जाका आहार विहारादिक समस्त प्रवृत्ति हिंसारहित, हिंसाका भयतैं यत्नाचार सहित होय अर अन्यके धनमें, अन्यकी स्त्रीमे कदाचित स्वप्नमें वाछा नाहीं होय सो ही उज्ज्वल आचरण का धारक है तिसकू ही जगत पूज्य मानै है। निर्लोभी का समस्त लोक विश्वास करै है सो ही लोकमे उत्तम है ऊर्ध्वलोकका पात्र है लोभ रहितका बडा उज्ज्वल यश प्रगटै है लोभी महामलीन समस्त दोषनिका पात्र है निंद्य कर्ममें लोभीका प्रीति होय है लोभीकै ग्राह्य अग्राह्य खाद्य-अखाद्य कृत्य अकृत्य का विचार ही नाहीं होय है इहां हू लोकमें निन्दा धर्मतैं पराङ्मुखता, निर्दयता प्रगट दरिद्र है लोभी धर्म, अर्थ कामकू नष्टकरि कुमरणकरि दुर्गति जाय है लोभीका हृदयमैं गुण अवकाश नाहीं पावै है इसलोक परलोकमें लोभीकू अचिन्त्य क्लेश दुःख प्राप्त होय है यातैं शौच धर्मका धारण ही श्रेष्ठ है बहुरि संयम हो आत्माका हित है इसलोकमें संयमका धारक

समस्त लोकनिके वदने योग्य होय है समस्त पापनिकरि नाहीं लिपै है याकी इस लोकमैं परलोकमें अचिन्त्य महिमा है अर संयमी है सो प्राणनिका घात अर विषयनिमैं अनुराग करि अशुभ कर्मका बन्ध करै है यातैं संयम धर्म ही जीवका हित है। बहुरि तप है सो कर्मका संवर निर्जरा करनेका प्रधान कारण है तप ही आत्माकू कर्ममल रहित करै तपका प्रभावतैं यहां ही अनेक ऋद्धि प्रगट होय है तपका अचिन्त्य प्रभावकू तपविना कामकू निद्राकू कौन मारै तपविना वांछाकू कौन मारै इंद्रियनिके विषयनिको मारनेमैं तप ही समर्थ है आशा-रूप पिशाचणी तपहीतैं मारी जाय है कामका विजय तपहीतैं होय है तपका साधन करनेवाला परीषह उपसर्ग आवते हू रत्न-त्रय धर्मतैं नाहीं छूटै यातैं तपधर्म ही धारण करना उचित है तपविना संसारतैं छूटना नाही है जातैं चक्रीपनाका हू राज्य छांडि तप धारै सो त्रैलोक्यमें वदने योग्य पूज्य होय है अर तपकू छांडि राज्य ग्रहण करै सो अतिनिन्द्य थुथुकार करने योग्यहोय तृणतैं हू लघु होय यातैं त्रैलोक्यमें तप समान महान् अन्य नाहीं।

बहुरि परिग्रह समान भार नाही जेते दुःख दुर्ध्यान क्लेश वैर वियोग शोक भय अपमान हैं ते समस्त परिग्रहके इच्छक हैं जैसैं परिग्रहतैं परिणाम निराला होय तैसैं तैसैं खेद रहित होय है जैसैं बड़ा भार करि दुःखित पुरुष भार रहित होय तदि सुखित होय तैसैं परिग्रहकी वासना मिटे सुखित होय है

समस्त दु ख अर समस्त पापनिका उपजावनेका स्थान ये परिग्रह हैं जैमैं नदीनिकरि समुद्र तृप्त नाहीं होय अर ईंधन करि अग्नि तृप्त नाही होय है आशारूप खाडा बडा आगाध है ताका तलस्पर्श नाहीं दिन दिन यामैं भरो त्यौं त्यौं खाडा वधता जाय जो आशारूप खाडा निधिनितैं नाहीं भरै सो अन्य सपदातैं कैसैं भरै अर ज्यों ज्यों परिग्रहकी आशाका त्याग करो त्यों २ भरतो चल्या जाय जातैं समस्त दु ख दूरि करनेकू त्याग ही समर्थ है त्यागहीतैं अन्तरङ्ग बन्धन रहित होय अनन्त सुखके धारक होहुगे परिग्रहके बधनमें बन्धे जीव परिग्रह त्यागतै ही छूटि मुक्त होय तातैं त्याग धर्म धारण ही श्रेष्ठ है बहुरि हे आत्मन् ! यो देह अर स्त्री पुत्र, धन धान्य राज्य ऐश्वर्यादिकनिमैं एक परमाणुमात्र हू तुम्हारा नाहीं है पुद्गल द्रव्य है जड़ है विनाशीक हैं अचेतन हैं इन परद्रव्यनिमैं 'अहं' ऐसा सकल्प तीव्र दर्शन मोह कर्मका उदयबिना कौन करावै इस परद्रव्यमैं आत्म सकल्प मेरे कदाचित् मति होहू मैं अकिंचनहू । या आकिंचन्यभावनाके प्रभावतैं कर्मका लेपरहित यहा ही समस्त बन्ध रहित हुआ तिष्ठे है साक्षात् निर्वाणका कारण आकिंचन्य धर्म ही धारण करो बहुरि कुशील महापाप है ससार परिभ्रमणका बीज है ब्रह्मचर्यके पालनेवालेतैं हिंसादिक पापनिका प्रचार दूर भागै है ।, समस्त गुणनिकी सपदा यामैं बसै है जितेन्द्रियता प्रगट होय है ब्रह्मचर्यतैं कुलजात्यादि भूषित होय हैं परलोकमैं अनेक ऋद्धिका धारक महर्द्धिक देव होय

दुर्लभ है नाहीं बोझ उठावना नाहीं दूरदेश जावना नाहीं क्षुधा तृषा शीत उष्णताकी वेदनाका आवना नाहीं किसीका विस-वाद झगडा है नाहीं अत्यन्त सुगम समस्त क्लेश दु ख रहित स्वाधीन आत्माका ही सत्य परिणमन है । यातैं समस्त ससार परिभ्रमणतैं छूटि अनन्तज्ञान दर्शन सुख वीर्यका धारक सिद्ध अवस्था याका फल है । ऐसे दशलक्षण धर्मका सक्षेप करि वर्णन कियो ।

\# समाप्त \#